साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

खेती संदेश

मूल्य : 6/- रुपए

All Subject to Patiala Jurisdiction.

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Chief Editor : Parminder Kaur • Issue Dt. 28-06-2025 • Vol.1 No.6 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

खरीफ सीजन में धान की बुवाई ने पकड़ी रफ्तार

देश में अब तक 58 फीसदी ज्यादा रकबे में हुई खेती

अब तक देशभर में सभी खरीफ फसलों का कुल रकबा 137.84 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गया है, जो कि पिछले साल इसी समय 124.88 लाख हैक्टेयर था। दक्षिण-पश्चिम मौनसून अब अपनी गति पकड़ चुका है और भारतीय मौसम विभाग ने इस साल सामान्य से ज्यादा बारिश की भविष्यवाणी की है।

खरीफ सीजन 2025 में धान की बुवाई 58 फीसदी ज्यादा, कपास और दलहन में भी बढ़त

देश भर के किसानों के लिए खरीफ सीजन की शुरुआत राहत भरी रही है. सरकार के ताजा आंकड़ों के अनुसार, इस बार 20 जून 2025 तक धान की बुवाई 13.22 लाख हैक्टेयर में हो चुकी है, जो पिछले साल इसी समय के मुकाबले 58 फीसदी ज्यादा है। पिछले साल यह आंकड़ा सिर्फ 8.37 लाख हैक्टेयर था।

जोर पकड़ रही है खरीफ की बुवाई

कृषि मंत्रालय द्वारा जारी बयान के मुताबिक, दलहनों की बुवाई भी बढ़कर 9.44 लाख हेक्टेयर तक पहुंच गई है, जो पिछले साल 6.63 लाख हैक्टेयर थी। मोटे अनाज यानी 'श्री अन्न' की खेती भी उत्साहजनक रही, जिसका रकबा 18.03 लाख हेक्टेयर दर्ज किया गया है, जबकि पिछले साल यह 14.77 लाख हैक्टेयर था।

जालंधर (पंजाब) में धान लगाते हुए खेत मजदूर।

कपास और गन्ने में भी बढ़त

कपास की बुवाई इस बार 31.25 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गई है, जबकि पिछले साल यह 29.12 लाख हेक्टेयर थी। वहीं, गन्ने की बुवाई में भी हल्की बढ़त दर्ज की गई है, अब तक 55.07 लाख हैक्टेयर में गन्ना बोया जा चुका है, जबकि पिछले साल यह 54.88 लाख हैक्टेयर था।

तिलहन और खाद्य फसलों में मिला-जुला असर

हालांकि खाद्य फसलों की बुवाई में जहां अच्छी बढ़त देखी गई है, वहीं गैर-खाद्यान्न श्रेणी में तेल फसलों की बुवाई में थोड़ी गिरावट आई है। इस बार अब तक 5.38 लाख हैक्टेयर में ही तेल फसलें बोई गई है, जबकि पिछले साल यह आंकड़ा 5.89 लाख हैक्टेयर था।

कुल आंकड़ों में बढ़त, मानसून से और उम्मीदें

अब तक देशभर में सभी खरीफ फसलों का कुल रकबा 137.84 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गया है, जो कि पिछले साल इसी समय 124.88 लाख हैक्टेयर था। दक्षिण-पश्चिम मानसून अब अपनी गति पकड़ चुका है और भारतीय मौसम विभाग ने इस साल सामान्य से ज्यादा बारिश की भविष्यवाणी की है। ऐसे में आने वाले हफ्तों में बुवाई और तेजी पकड़ सकती है।

किसानों के हित में जारी

बीजोपचार

अच्छी फसलों का मूल आधार

बीजोपचार के लाभ

- अधिक अंकुरण
- अधिक प्रबल पौधे
- आरंभिक बिमारियों का प्रभावी नियंत्रण
- स्वस्थ पौधों की संख्या ज्यादा

देश के सभी किसान, पढ़ें होकर होशियार

अच्छी पैदावार तभी होगी, जब बीजों का हो सही उपचार

पालक को ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। ठंड में पत्तियों की बढ़वार अधिक होती है। परन्तु मध्यम जलवायु में इसको साल भर भी उगाया जा सकता है। पालक के लिए बलुई दोमट भूमि उपयुक्त है, जिसका पी.एच. मान 6–7 के बीच का अच्छा होता है। परन्तु इसको सभी प्रकार की भूमि में भी उगाया जा सकता है। भूमि को तीन से चार बार जुताई करके तैयार किया जाता है।

पालक की खेती

अभिषेक एवं डॉ. प्रदीप कुमार सिंह,
सब्ज़ी विज्ञान विभाग, महाराणा प्रताप बागवानी विश्वविद्यालय, करनाल (हरियाणा)

पालक की पत्तियों और बीजों को बेच कर इसकी खेती से ज्यादा कमाई कर सकते हैं। पालक की खेती एक ऐसी खेती है, जो कम समय में और कम लागत से अच्छा मुनाफा दे सकती है। पालक की फसल एक बार की बुवाई में 4 से 5 बार कटाई देती है। परन्तु बीज उत्पादन के लिए दो ही बार कटाई की जाती है। पालक के पत्तों के अंदर प्रोटीन, मिनरल्स, कैल्शियम, लौहा तत्व, फास्फोरस, पोटाश व विटामिन ए और सी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है।

पालक को ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। ठंड में पत्तियों की बढ़वार अधिक होती है। परन्तु मध्यम जलवायु में इसको साल भर भी उगाया जा सकता है। पालक के लिए बलुई दोमट भूमि उपयुक्त है, जिसका पी. एच. मान 6-7 के बीच का अच्छा होता है। परन्तु इसको सभी प्रकार की भूमि में भी उगाया जा सकता है। भूमि को तीन से चार बार जुताई करके तैयार किया जाता है। प्रत्येक जुताई के बाद सुहागा लगाया जाता है, जिससे मिट्टी भुरभुरी व समतल हो जाती है।

प्रमुख किस्में :

ऑल ग्रीन : इस किस्म के पौधे एक समान हरे पत्ते मुलायम और 15 से 20 दिनों के अंतराल पर कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। इसकी 6 से 7 कटाईयां आसानी से की जा सकती हैं। यह एक अधिक उपज देने वाली किस्म है। इसमें सर्दी के दिनों में करीब ढाई महीने बाद बीज और डंठल आते है। इसकी औसत उपज 192. 5 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

पूसा पालक : इस पालक किस्म को 'स्विसचार्ड' से संकरण करवाकर विकसित किया गया है। इसमें एक समान हरे पत्ते आते हैं। इसमें जल्दी से फूल वाले डंठल बनने की समस्या नहीं आती है।

पूसा हरित : इस किस्म को पहाड़ी इलाकों में पूरे वर्ष उगाया जा सकता है। इसके पौधे ऊपर की तरफ बढ़ने वाले, ओजस्वी, गहरे हरे रंग के और बड़े आकार वाले होते हैं। इसकी कई बार कटाईयां की जा सकती हैं। इसमें बीज बनाने वाले डंठल देर से निकलते हैं। इस किस्म को विभिन्न प्रकार की जलवायु और क्षारीय भूमि में भी आसानी से उगाया जा सकता है।

पूसा ज्योति : यह एक प्रभावी किस्म है, जिसमें काफी संख्या में मुलायम, रसीली तथा बिना रेशे की हरी पत्तियां आती है। पौधे काफी बढ़ने वाले होते है, जिससे कटाई बहुत कम अन्तराल पर की जा सकती है। इस किस्म में ऑल ग्रीन की अपेक्षा पोटाशियम, कैल्शियम, सोडियम तथा एस्कार्बिक अम्ल की मात्रा अधिक पाई जाती है। इस किस्म की कुल 6 से 7 कटाईयां आसानी से की जा सकती हैं।

जोबनेर ग्रीन : इस पालक (Spinach) किस्म में एक समान हरे, बड़े, मोटे, रसीले तथा मुलायम पत्ते आते हैं। पत्ती पकाने पर आसानी से गल जाती है। इस किस्म को क्षारीय भूमि में भी उगाया जा सकता है। इसकी औसत उपज 197.6 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है। यह किस्म 7-10.5 पी.एच. क्षारीय मिट्टी में भी अच्छी चलती है।

हिसार सलेक्शन-23 : इसकी पत्तियां बड़ी, गहरे हरे रंग की मोटी, रसीली और मुलायम होती है। यह एक कम समय में तैयार होने वाली किस्म है। इसकी पहली कटाई बुवाई के 30 दिनों बाद शुरू की जा सकती है और 6 से 8 कटाईयां 15 दिनों के अंतर पर आसानी से की जा सकती हैं।

बनर्जी जाइंट : इस पालक (Spinach Farming) किस्म के पत्ते काफी बड़े, मोटे तथा मुलायम होते हैं। इसके तने और जड़ें भी काफी मुलायम होती हैं।

पंजाब ग्रीन : इसकी पत्तियां चमकीली व हरे रंग की मिट्टी होती हैं व कड़वापन भी नहीं होता। टहनियां मोटी व लंबी जिन पर गुलाबी धारियां होती हैं।

बीज की मात्रा व बुवाई की विधि : इसके लिए बीज की मात्रा 8 से 10 किलोग्राम प्रति एकड़ पर्याप्त होती है। पाक की बुवाई पंक्तियों/कतार में करें। कतार से कतार की दूरी 20 सैंटीमीटर और पौधे से पौधे की दूरी 5 सैंटीमीटर रखते हैं। बीज को 2 से 3 सैंटीमीटर की गहराई पर बोना चाहिए। बीज उत्पादन के लिए कतार से कतार की दूरी 40 सैंटीमीटर और पौधे से पौधे की दूरी 10 सैंटीमीटर रखें। बुवाई के बाद एक हल्की सिंचाई करें। इसके बाद सिंचाई 8 से 10 दिनों के अंतराल पर आवश्यकता अनुसार करें।

खाद व उर्वरक : इसके लिए 20 टन गोबर की गली-सड़ी खाद, 32 किलोग्राम नाइट्रोजन तथा 16 किलोग्राम फास्फोरस प्रति एकड़ की आवश्यकता है। गोबर की खाद व फास्फोरस और आधी नाइट्रोजन को अन्तिम जुताई के समय खेत में डाल देनी चाहिए और नाइट्रोजन की बाकी मात्रा को एक कटाई के बाद डाल दें।

पालक की फसल में सिंचाई प्रबंधन : यदि बुवाई के समय क्यारी में नमी की कमी हो तो बुवाई के तुरन्त बाद एक हल्की सिंचाई कर दें। पालक को अधिक पानी की आवश्यकता होती है। अतः समय-समय पर सिंचाई करते रहें। जाड़ों की फसल के लिए 8-10 दिनों के बाद तथा जायद की फसल की सिंचाई हल्की-हल्की, 2-3 दिन में करते रहना अति आवश्यक है।

पालक की अच्छी उपज के लिए सिंचाई का बहुत ही योगदान होता है। खेत में नमी के अनुसार 2-3 दिन के बाद तथा जायद की फसल के लिए रोज़ शाम को ध्यान से पानी देते रहना चाहिए। पानी देते समय ध्यान रहे कि खेत में लगे पौधे टूटे नहीं और फव्वारे से ऊपर की तरफ से पानी नहीं देना चाहिए।

अन्य कृषि क्रियाएं : फसल की प्रारम्भिक अवस्था में 2 से 3 बार निराई-गुड़ाई करने से खरपतवार नष्ट हो जाते हैं।

खेत का निरीक्षण : पालक के खेत को फसल के दौरान फूल अवस्था तथा बीज बनने की अवस्था में निरीक्षण करना चाहिए। इसमें दूसरी किस्म के पौधे तथा रोग ग्रसित पौधों को उखाड़ कर खेत से बाहर फेंक देना चाहिए।

फसल की कटाई : फसल की पहली कटाई 30 से 35 दिनों के बाद की जाती है। इसके बाद 15 से 20 दिनों के अन्तर पर कटाई की जाती है।

पैदावार : पालक की पत्तियों की औसत पैदावार 32 से 40 क्विंटल प्रति एकड़ होती है और बीज की मात्रा 4 से 5 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

हानिकारक कीट और रोकथाम :

चेपा : इसका हमला दिखाई दें, तो मैलाथियान 50 ई.सी. 350 मिलीलीटर को 80-100 लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें। मैलाथियान की स्प्रे के बाद तुरन्त कटाई ना करें। स्प्रे के 7 दिनों के बाद कटाई करें।

बीमारियां और रोकथाम :

पत्तों पर गोल धब्बे : पत्तों पर, छोटे गोलाकार धब्बे दिखाई देते हैं, बीच से सलेटी और लाल रंग के धब्बे पत्तों के किनारों पर दिखाई देते हैं। बीज फसल में यदि इसका हमला दिखाई दे, तो कार्बेन्डाजिम 400 ग्राम या इंडोफिल एम-45, 400 ग्राम को 150 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ में करें। यदि आवश्यकता हो, तो दूसरी स्प्रे 15 दिनों के अंतराल पर करें।

बीज उत्पादन : इसके फूल उभयलिंगी होते हैं, परन्तु इसमें मुख्य रूप से पर-परागण ही होता है। पर-परागण प्रायः हवा द्वारा ही होता है। इसका संकरन, चुकन्दर व स्वीस चार्ड से भी हो जाता है। अतः अन्य किस्मों के साथ इन फसलों से भी पर्याप्त विलगन दूरी रखनी चाहिए। आधारी बीज के 1,600 मीटर एवं प्रमाणित बीज के लिए 1,000 मीटर का विलगन अन्तर रखते हैं। साधारण रूप से दो-तीन कटाई के बाद पौधों को पुष्प वृन्त बनने के लिए छोड़ देते हैं। आल ग्रीन किस्म में बुवाई के 80 दिन में बीज कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। यद्यपि सभी बीज फल एक साथ नहीं पकते हैं। फिर भी कटाई एक साथ ही होती है, क्योंकि बीजों का बिखराव नहीं हो पाता है। इसे सुखा कर साफ कर लेते हैं। इसकी औसत बीज उपज 9.80 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

हरियाणा सरकार ने अपने राज्य में गिरते हुए भूजल स्तर को नियंत्रित करने के लिए भूमि की उर्वरता में सुधार करने के लिए फसल विविधीकरण को बढ़ावा देने के लिए और किसान भाईयों की उत्पादकता और आय में बढ़ोत्तरी करने के लिए हरियाणा फसल विविधीकरण योजना, मेरा पानी मेरी विरासत के तहत खरीफ 2020 में शुरू की।

हरियाणा फसल विविधीकरण
मेरा पानी मेरी विरासत योजना

डॉ. संजय कुमार, डॉ. प्रशांत कौशिक, कृषि विज्ञान केन्द्र, कैथल एवं
डॉ. विनोद कुमार, कृषि विज्ञान केन्द्र, फरीदाबाद

हरियाणा राज्य में किसान भाईयों द्वारा सालों से चली आ रही एक सी फसल उगाने की वजह से खेतों की पैदावार क्षमता पर काफी बुरा प्रभाव पड़ रहा है। धान की खेती में बहुत अधिक मात्रा में पानी की जरूरत पड़ती है। कृषि अनुसंधानों के अनुसार एक किलोग्राम चावल की पैदावार के लिए लगभग 2500-3000 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। धान की फसल में पानी का ज्यादा प्रयोग होने के कारण प्रदेश के कई ज़िलों में भूजल स्तर काफी नीचे गिरता जा रहा है।

हरियाणा सरकार ने अपने राज्य में गिरते हुए भूजल स्तर को नियंत्रित करने के लिए भूमि की उर्वरता में सुधार करने के लिए फसल विविधीकरण को बढ़ावा देने के लिए और किसान भाईयों की उत्पादकता और आय में बढ़ोत्तरी करने के लिए हरियाणा फसल विविधीकरण योजना, मेरा पानी मेरी विरासत के तहत खरीफ 2020 में शुरू की। इस योजना के तहत धान की पारम्परिक फसल छोड़ने वाले किसानों को राज्य सरकार द्वारा प्रोत्साहित किया जाएगा। राज्य सरकार ने धान की खेती को छोड़ कर अन्य फसलों जैसे कपास, मक्का, दलहन, ज्वार, अरंडी, मूंगफली, सब्ज़ी एवं फल की खेती की ओर रुख करने वाले

किसानों के लिए अनुदान की राशि में हाल में ही वृद्धि की गई है।

योजना के लाभ और विशेषताएं :

* अब इस योजना के तहत धान की खेती छोड़ने वाले किसानों को 7000 रुपए प्रति एकड़ की बजाय 8000 रुपए प्रति एकड़ दिए जाएंगे।

* इसी तरह धान की सीधी बुवाई करने वाले किसानों को मिलने वाली सहायता राशि 4000 रुपए से बढ़ा कर 4500 रुपए प्रति एकड़ कर दी गई है।

* इसके अलावा पराली प्रबंधन करने वाले किसानों को अब 1000 रुपए प्रति एकड़ की बजाय 1200 रुपए प्रति एकड़ का अनुदान दिया जाएगा।

* राज्य सरकार मक्का उगाने वाले किसानों को 2400 रुपए प्रति एकड़ और दलहन (मूंग, उड़द, अरहर) की पैदावार करने वाले किसान भाईयों को 3600 रुपए प्रति एकड़ की दर से अनुदान दिया जाएगा।

* राज्य सरकार की तरफ से इस योजना के तहत यह अनुदान राशि किसानों को केवल 5 एकड़ की खेती के लिए दी जाती है।

* इस योजना के माध्यम से प्रदेश में विभिन्न प्रकार की फसलों की बुवाई होगी, जिससे भूमि की उर्वरता, शक्ति में सुधार होगा और मिट्टी के सूक्ष्म जीवों की संख्या में बढ़वार होगी।

* इस योजना से प्रदेश के भूजल स्तर की समस्या का समाधान होगा।

* फसल विविधीकरण से कीटों और खरपतवारों का दोबारा से उभरना, मिट्टी की लवणता, पर्यावरण प्रदूषण, कृषि लाभ में कमी आदि समस्याओं को कम किया जा सकता है।

* विभिन्न प्रकार की फसलों को उगाने से किसानों को विभिन्न बाज़ारों में प्रवेश करने और विविध उपभोक्ताओं की मांगों को पूरा करने की अनुमति मिलती है। यह फसल चक्रण विशेष फसलों के प्रत्यक्ष विपणन के माध्यम से मूल्य संवर्धन के अवसर भी पैदा करता है।

* फसल विविधीकरण विशेष रूप से खाद्य फसलों के लिए आहार विविधता और खाद्य सुरक्षा को बढ़ावा देती है। फसल विविधीकरण कुपोषण से निपटने और अधिक संतुलित व पौष्टिक आहार सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है।

* इस योजना से फसलों के मूल्य जोखिम को प्रबंधित करने में मदद मिलेगी, क्योंकि इससे सभी उत्पादों को एक साथ कम बाज़ार मूल्य का सामना नहीं करना पड़ेगा, जिससे यह योजना किसान भाईयों की आय में वृद्धि करने में कारगर साबित होगी।

योजना के तहत आवेदन हेतु पात्रता :

* आवेदक राज्य का स्थाई निवासी होना चाहिए।

* आवेदक को अपने पिछले वर्ष की खेती वाले धान के कम से कम 50 प्रतिशत हिस्से में विभिन्न फसलों की बुवाई करना जरूरी है।

* आवेदक का बैंक खाता होना चाहिए, जो आधार कार्ड से लिंक हो।

योजना के लिए जरूरी दस्तावेज :

* आधार कार्ड
* पहचान पत्र
* निवास प्रमाण-पत्र
* मोबाइल नंबर
* बैंक खाता विवरण
* पासपोर्ट साइज़ फोटो
* कृषि भूमि संबंधी दस्तावेज

योजना के लिए पंजीकरण : किसान भाईयों को इस योजना का पंजीकरण कृषि एवं किसान कल्याण विभाग हरियाणा की आधिकारिक वेबसाइट पर जाकर कर सकते हैं।

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 01 अंक : 06
तिथि : 28-06-2025

सम्पादक

परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड

डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly **'KHETI SANDESH'** Printed at **Drishti Printers,** Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

भारतीय मूल का औषधीय पौधा अर्जुन

भारतीय मूल की जिन गुणकारी जैव सम्पदाओं पर विकसित देशों के वैज्ञानिकों की लम्बे समय से कुदृष्टि लगी हुई है। अर्जुन का वृक्ष भी उनमें से एक है। भारत में प्राचीन काल से ही हृदय रोग के साथ ही कई जटिलतम रोगों में अर्जुन के वृक्ष की छाल से बनी औषधियों का प्रयोग होता चला आ रहा है, जिसका भारतीय चिकित्सा विज्ञान के ग्रन्थों में विशद वर्णन मिलता है।

भारतीय चिकित्सा पद्धति में अर्जुन : प्राचीन भारतीय चिकित्सा ग्रन्थों में अर्जुन को कसैला, गरम, कफनाशक, मधुर शीतल, कान्तिजनक बलकारक, हल्का, व्रण एवं वृणशोधन, अस्थिभंग, अस्थि संहार पित्तप्रथा तृषा, दाह प्रमेह पाण्डु, रोग, हृदय रोग, विषवाध्य, वतथ्लय, मेड वृद्धि, रूधिर विकास, पसीना, श्वास, भस्म और वात रोगों में उपयोगी बताया गया है।

अर्जुन में पाया जाने वाला कषाय रस शीतवीर्य, हृदय रोगनाशक, हृदय को शक्ति देने वाले गुणों से सम्पन्न होता है। यह क्षत, क्षय विष, रक्त विकार, मेदोरोग, प्रमुह, तृण, कफ एवं पित्त का निवारक है।

महर्षि चरक ने अर्जुन को संकोचन एवं मूत्र साफ करने वाला बताया है। सुश्रुत ने अर्जुन की राख को सर्पदंश में उपयोगी कहा है। आचार्य वागभट्ट ने अर्जुन को हृदय रोग में उपयोगी बताया है, उन्होंने इसे बिच्छु के डंक से भी उपयोगी बताया है। वाग्भट्ट के अतिरिक्त चक्रदत्त, भाव मिश्र तथा अन्य भारतीय आयुर्वेदाचार्यों ने भी अर्जुन का हृदय रोग की प्रमुख औषधि के रूप में उल्लेख किया है।

आयुर्वेद के अलावा यूनानी चिकित्सा पद्धति में भी अर्जुन की विशेषताओं का वर्णन मिलता है। इस गैर-भारतीय प्राचीन देशज चिकित्सा पद्धति में अर्जुन की छाल को कड़वा, कफ निवारक, कामोद्धीपक, मूत्र शोधक एवं पौष्टिक बताया गया है। हकीम अस्तिभंग के अलावा बाहरी घाव, पित्त समन, पुराने प्रमेह और मूत्र रोगों में अर्जुन के काढ़े का प्रयोग करते हैं।

आधुनिक युग में अर्जुन : वर्तमान समय में भी देशी-विदेशी दोनों ही चिकित्सा वैज्ञानिकों ने अपने शोध में अर्जुन को प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में वर्णित गुणों के अनुरूप ही पाया है। जापानी वैज्ञानिक का अमेरिका में पंजीकृत पेटेन्ट इसका सबसे बड़ा प्रमाण है। सन् 1909 में चर्चित वैज्ञानिक डॉ. घोषाल ने अर्जुन की छाल के रासायनिक विश्लेषण में इसमें एक विशेष पदार्थ, ग्लुकोसाइड तथा कैल्शियम कार्बोनेट, सोडियम व अन्य क्लोराइडों की उपस्थिति को प्रमाणित किया था। इस संबंध में एक अन्य भारतीय चिकित्सक कर्नल चोपड़ा ने सन् 1923 में लिखा था कि डॉ. घोषाल ने अर्जुन की छाल को हृदय रोगों में उपयोगी पाया। एक अन्य भारतीय आधुनिक चिकित्सा वैज्ञानिक डॉ. देशाई ने अर्जुन को चना और कषाय अम्ल जैसा रक्त वाहिनियों में संकोचनकारी तथा हृदय वाहिनियों में रक्त संचार की वृद्धि करने में सक्षम पाया। अपने शोध उन्होंने अर्जुन को हृदय को शक्ति देने वाला रक्तशोधन और शरीर में स्फूर्ति और उत्तेजना पैदा करने वाला पाया। कोलकाता में अभ्यासरत एक प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. व्यारी मोहन दास गुप्ता ने आचार्य वाग्भट्ट द्वारा वर्णित तथ्यों को आधार बना कर किए गए अपने प्रयोग में अर्जुन की छाल से प्राप्त टिंचर को हृदय रोगियों के उपचार में अद्भुत लाभकारी पाया।

अर्जुन में उपस्थित रासायनिक तत्व : अर्जुन में रंगहीन क्रिस्टलाइन तत्व अजुनेटिव लैक्टोन एवं टैनिन 15.5 प्रतिशत, कैल्शियम अवयव 25 प्रतिशत तथा मैग्नीशियम, साल्ट आर्सेनिक एसिड तथा रंजक भी अल्प मात्रा में पाया जाता है।

अर्जुन से बनने वाली औषधियां और उनके उपयोग :

अर्जुन घृत : यह हृदय रोगों की आयुर्वेदिक औषधि है, इसके निर्माण के लिए अर्जुन की छाल के बारीक चूर्ण को दस गुणा जल में चौथाई बचने तक पकाया जाता है। इसमें अर्जुन कल्क और गो घृत मिला कर पुन: जल रहित होने तक पकाया जाता है। वैद्य लोग हृदय रोगी को यह घृत 5 से 10 ग्राम सुबह-शाम सेवन करते हैं, जो लाभकारी भी पाया गया है।

क्षयाकास : यह कठिन क्षय रोग की आयुर्वेदिक औषधि है। क्षय रोगी को जब खांसने में कफ के साथ खून आता है, उस हालत में रोगी को इसका सेवन करवाया जाता है। इसका निर्माण अर्जुन की छाल के चूर्ण को अड़ूस (वासा) के पत्तों के रस की सात भावना देकर बने रसायन के रूप में होता है। इसे मिश्री गो घृत या शहद के साथ रोगी को चटाया जाता है, जिसका प्रभाव क्षयरोग में अत्यंत प्रभावकारी है।

अर्जुनारिष्ट : यह अर्जुन दाल से बनने वाली फेफड़े एवं हृदय रोगों की सबसे उपयोगी औषधि है। इसके निर्माण के लिए अर्जुन की छाल और उसके आधे के बराबर मुनक्का और महुयें के फूल को 10 गुना जल में औटाते हैं, चौथाई जल शेष बचने पर उतार कर छान लेते हैं। इस छाने क्वाथ में अर्जुन की छाल के बराबर पुराना गुड़ और धावड़ी का फूल डाल कर मिट्टी के बर्तन में पैक करके रख देते हैं। सवा माह के बाद मिट्टी के बर्तन को खोल कर द्रव को छान कर बोतलों में भर लिया जाता है। हृदय रोग के अलावा अर्जुन का प्रयोग अन्य रोगों में भी होता है, जिसका विवरण निम्नवत है :

अर्जुन क्वाथ : फूटे हुए ब्रणों से जब रक्त वाहिनियों का दूषित, रोगकारी, कीटाणु युक्त जल रिस कर रक्त में मिलने लगता है, ऐसे ब्रणों को अर्जुन छाल के क्वाथ से धोने वाले क्वाथ को पीने से अर्जुन छाल में पाए जाने वाले कैल्शियम आदि उपयोगी तत्वों के कारण घाव तेज़ी से भरने लगता है।

इसके अलावा रक्तातिसार में बकरी के दूध और जल में बने अर्जुन क्वाथ या छाल के बारीक चूर्ण को मक्खन या छाछ मिला कर सेवन करवाने से रक्तातिसार से मुक्ति मिल जाती है। अर्जुन का काढ़ा प्रात: एवं सायं: लेने से जीर्णज्वर के साथ ही शरीर की दुर्बलता और पाण्डुता भी दूर हो जाती है। कूटे हुए अर्जुन की छाल रात भर जल में भिगोने के बाद उसे सुबह उबाल कर काढ़े के रूप में लेने से रक्त पित्त शांत हो जाता है।

अर्जुन वृक्ष का सामान्य परिचय : हरितक्या कुल (कोम्ब्रेटासी फैमिली) का टर्मनेलिया अर्जुन या एटक्यूलियारेन्स (लैटिन) या अर्जुना माइरोबालन (अंग्रेज़ी) नामों से चिन्ह्रित भारतीय मूल के इस बहुरोग निवारक और हृदय रोगों के निवारण में अत्याधिक उपयोगी औषधीय वृक्ष अर्जुन की ऊंचाई 60 से 80 फीट तक होती है। इसकी पत्ती फलदार वृक्ष अमरूद से अधिक मिलती है। बहुधा लोगों को भ्रम हो जाता है कि यह अमरूद का ही विशाल वृक्ष है।

यह भारत के प्राय: सभी प्रांतों में पाया जाता है। हिमालय की तराई, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, तामिलनाडू में और आंध्र प्रदेश में बहुतायत से पाया जाता है।

वनवासी जनजीवन में इस वृक्ष का विशेष महत्व है। कई वनवासी जातियों के लोग मांगलिक अवसरों पर अर्जुन पुष्पों का हार पहनते है। विभिन्न भारतीय क्षेत्रों में इसे अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है। संस्कृत में इसे कुकुम और अर्जुन नामों से जाना जाता है। हिन्दी में अर्जुन, कोह, कछुआ, बंगला में अर्जुन, मराठी में अर्जुन और सादड़ के क्षेत्र में अर्जुन को अर्जुन, फाल्गुन, पार्थ, चित्रयोद्धि, धनंजय, वैरातक, कीरीट, नदी, सर्ज्जपाण्डव:, वीरतरू, कर्णारि, इंद्रदुक्त, कुकुम इन्द्रदुम, शम्बर, गाण्डबी, करवीर, कौन्तेय, इन्द्रसुवु, गण्डीरी, शिवमल्लक, सत्यसाची विरदु, कृष्ण सारथि, पृथाज, धन्वी, वीर और वीर वृक्ष नामों से संबोधित किया गया है।

पर्यावरण संरक्षण में अर्जुन की भूमिका : आज की बेहतहाशा बढ़ती आबादी और आधुनिक जीवनशैली एवं रहन-सहन से जनसामान्य में हृदय रोग की भारी बढ़ोत्तरी ने अर्जुन वृक्ष की उपचारक महत्ता काफी बढ़ाई है, वहीं इसकी पर्यावरणीय विशेषताओं के चलते बढ़ती पर्यावरणीय चेतना ने भी इसके महत्त्व को और बढ़ाया है।

पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से अर्जुन का विशेष महत्व है। इसके वृक्ष, क्षारीय, लवणीय, ऊसर, नम पथरीली और अनुपयोगी भूमि पर आसानी से उगाए जा सकते है। नदियों, तालाबों और नहरों के किनारे दलहन वाली, कटाव वाली नमी भूमि पर इसके वृक्ष को लगा कर भूमि कटाव को रोक कर मृदा क्षरण पर अंकुश लगाने का कार्य किया जा सकता है।

मधुमक्खियों को इसका फूल प्रिय होता है। अत: अनुपयोगी बेकार भूमि पर इसके वृक्ष को लगाने के बाद मधुमक्खी पालन का कार्य बखूबी किया जा सकता है, जिससे बेरोज़गारी के इस युग में ग्रामीण नौजवान महिलाओं को अर्जुन के छाल और मधु संग्रह के कार्यों में लगा कर रोज़गार दिया जा सकता है। आज पर्यावरण संरक्षण के लिए सड़कों के किनारे लगे शीशम के वृक्षों का फफूंद जनित रोगों से व्यापक विनाश हो रहा है। उनकी जगह अर्जुन के वृक्ष व्यापक उपयोगी साबित होंगे, क्योंकि इसके वृक्षों में रोग और नमी का प्रभाव बहुत कम पड़ता है। इनकी ऊंचाई शीशम के वृक्ष से कम नहीं होती और ये छायादार भी होते हैं। इसके अलावा ये सड़कों के किनारे के निवासियों के लिए मधुमक्खी पालन कर शहद संचयन का रोज़गार भी उपलब्ध करवा सकते हैं।

भारत को नीबूवर्गीय फलों का घर माना जाता है। यहां इस वर्ग की विभिन्न प्रजातियां पाई जाती हैं। इस वर्ग के फलों में मुख्य रूप से संतरा, मौसमी, नींबू, माल्टा एवं ग्रेपफ्रूट आते हैं। केले एवं आम के बाद नीबूवर्गीय फसलों का भारत में क्षेत्रफल की दृष्टि से तीसरा स्थान है। नींबू, जिसको आम बोलचाल की भाषा में कागजी नींबू के नाम से जाना जाता है, को देश के लगभग सभी राज्यों में उगाया जाता है। यह फल अपने गुणों के कारण खासा लोकप्रिय है। यही कारण है कि गर्मियों में इसके भाव 150–200 रूपये प्रति कि.ग्रा. से भी अधिक पहुंच जाते हैं। इसमें औषधीय गुण मौजूद होने के कारण इसके फलों का उपयोग विभिन्न तरीकों से किया जाता है। इसके फलों में विटामिन 'सी' के अलावा विटामिन 'ए', विटामिन 'बी–1', लौह, फॉस्फोरस, कैल्शियम, प्रोटीन, रेशा, वसा, खनिज और शर्करा भी मौजूदा होते हैं।

कागजी नींबू की खेती

अनोप कुमारी, कृषि विज्ञान केन्द्र, मौलासर–नागौर (कृषि विश्वविद्यालय), जोधपुर (राजस्थान)

कागजी नींबू के फलों में 42 से 50 प्रतिशत तक रस निकलता है। इसका प्रयोग स्क्वैश, कोर्डियल और अम्ल इत्यादि बनाने के साथ-साथ प्रतिदिन के खाने में भी होता है। नींबू का रस पीने से शरीर में ताजगी एवं स्फूर्ति का भाव पैदा होता है। इसके फलों से स्वादिष्ट आचार भी बनाया जाता है। यही नहीं इसके छिलकों को सुखाकर विभिन्न तरह के सौंदर्य प्रसाधन भी बनाये जाते है। इन सभी विशेषताओं के कारण इसकी मांग लगभग वर्ष भर बनी रहती है। परंतु तकनीकी जानकारी के अभाव एवं कीट व रोगों का सही समय पर निदान न कर पाने के कारण किसानों को आशातीत लाभ नहीं मिल पाता है।

भूमि व जलवायु :- नींबू का पौधा काफी सहिष्णु प्रवृत्ति का होता है, जोकि विपरीत दशाओं में भी सहजता से पनप जाता है। अच्छा उत्पादन लेने के लिए उपोष्ण तथा उष्ण जलवायु सर्वोत्तम मानी गई हैं। ऐसे क्षेत्र जहां पाला कम पड़ता है, वहां इसको आसानी से उगा सकते है। इसकी खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। इसके पौधों की समुचित बढ़वार एवं पैदावार के लिए बलुई तथा बलुई दोमट मृदा उत्तम है, जिसमें जीवांश पदार्थ प्रचुर मात्रा में उपस्थित हों। इसके साथ ही जल निकास का भी समुचित प्रबंधन हो एवं उसका पी-एच मान 5.5 से 7.5 के मध्यम हो। मृदा में 4-5 फुट की गहराई तक किसी प्रकार की सख्त तह नहीं हो, तो अच्छा रहता है।

उन्नत प्रजातियां :- कागजी नींबू की कई प्रजातियां प्रचलित है, जिसका चयन क्षेत्र विशेष अथवा गुणों के आधर पर कर सकते हैं। कुछ महत्वपूर्ण प्रजातियां हैं: पूसा अभिनव, पूसा, उदित, विक्रम, कागजी कला, प्रमालिनी, चक्रधर, साई सर्बती, जय देवी, पी.के.एम.-1, एन.आर.सी.सी. नींबू-7 और एन.आर.सी.सी. नींबू-8 इत्यादि। पौधे किसी विश्वसनीय स्त्रोत अथवा सरकारी नर्सरी से ही खरीदें। पौधे खरीदते समय यह भी ध्यान रखें कि वे स्वस्थ एवं रोगमुक्त हों।

पौध प्रसारण :- नींबू का प्रवर्धन बीज, कलिकायन एवं एयर लेयरिंग (गूटी विधि) से किया जा सकता है। इसके बीजों में बहुभ्रूणता पाई जाती है, जिसके कारण इसका व्यावसायिक प्रसारण बीज द्वारा ही अधिक किया जाता है। इसके बीजों में किसी प्रकार की सुषुप्तावस्था नहीं पाई जाती है।

कागजी नींबू में गूटी विधि भी काफी प्रचलित है। इसके द्वारा कम समय में ही अच्छे पौधे तैयार किए जा सकते हैं। इस कार्य के लिए वर्षा वाला मौसम सर्वोत्तम होता है। गूटी तैयार करने के लिए पेंसिल की मोटाई की शाखा (1.0-1.5 सैं.मी.), जोकि लगभग एक वर्ष पुरानी हो, का चयन कर लें। चयनित शाखा से छल्ले के आकार की 2.5-3.0 सैं.मी. लंबाई की छाल निकाल लें। छल्ले के ऊपरी सिरे पर सेराडेक्स पाऊडर या इंडोल ब्यूटारिक एसिड (आई.बी.ए.) का लेप लगाकर छल्ले को नम मॉस घास से ढक दें। ऊपर से लगभग 400 गेज की पॉलीथीन को 15-20 सैं.मी. चौड़ी पट्टी से 2-3 बार लपेटकर सुतली अथवा धागे से दोनों सिरों को कसकर बांध दें। 1.5-2.0 महीने बाद जब पॉलीथीन में से जड़ें दिखाई देने लग जाएं तब इस शाखा को पौधे से अलग करके नर्सरी में थैलियों में लगा दें।

सिंचाई :- यदि वर्षा नहीं हो रही हो तो रोपण के तुरन्त बाद सिंचाई अवश्य करें। इसके पश्चात मृदा में पर्याप्त नमी बनाये रखें, खासकर पौधों के रोपण के शुरूआती 3-4 सप्ताह में और इसके बाद एक नियमित अंतराल पर सिंचाई करते रहें। पौधों की सिंचाई थाला बनाकर अथवा टपक सिंचाई पद्धति से कर सकते हैं। सिंचाई करते समय हमेशा यह ध्यान रखें कि पानी, पौधे के मुख्य तने के संपर्क में न आए। इसके लिए तने के आसपास हल्की ऊंची मृदा चढ़ा दें।

खाद एवं उर्वरक :- खाद एवं उर्वरकों की मात्रा देने का समय और तरीका पोषण प्रबंधन में बहुत महत्वपूर्ण है। खाद एवं उर्वरकों की मात्रा, मृदा की उर्वरा क्षमता एवं पौधे की आयु पर निर्भर करती हैं। सही-सही मात्रा का निर्धारण करने के लिए मृदा की जांच आवश्यक है। यदि संतुलित मात्रा में खाद एवं उर्वरक डाली जाए तो अच्छे उत्पादन के साथ-साथ मृदा के स्वास्थ्य का भी ध्यान रखा जा सकता है।

सारणी 1. खाद एवं उर्वरकों की मात्रा

पौधे की आयु (वर्ष)	गोबर की खाद (कि.ग्रा.)	यूरिया (ग्राम)	सिंगल सुपर फॉस्फेट (ग्राम)	म्यूरेट ऑफ पोटाश (ग्राम)
1 वर्ष	10	125	250	–
2 वर्ष	20	250	500	–
3 वर्ष	30	375	750	200
4 वर्ष	40	500	1000	200
5 वर्ष और अधिक	50	625	1250	400

खाद तथा उर्वरकों को हमेशा पौधों के मुख्य तने से 20-30 सैं.मी. की दूरी पर डालना चाहिए। गोबर की खाद की पूरी मात्रा को दिसंबर-जनवरी में, जबकि उर्वरकों को दो भागों में बांटकर दें। पहली मात्रा मार्च-अप्रैल में एवं शेष आधी मात्रा को जुलाई-अगस्त में दें। नींबू में सूक्ष्म पोषक तत्वों का भी बहुत महत्व है। अतः इतनी कमी के लक्षण दिखाई देने पर 0.4-0.7 प्रतिशत जस्ते व फेरस सल्फेट तथा 0.1 प्रतिशत बोरेक्स का छिड़काव करें।

कांट-छांट :- कागजी नींबू में स्वाभाविक तौर पर कटाई-छंटाई की आवश्यकता नहीं होती हैं। परंतु रोपण के प्रारंभिक वर्षों में पौधे को सही आकार देने के लिए जमीन की सतह से लगभग दो फुट की ऊंचाई तक शाखाओं को हटाते रहना चाहिए। बाद के वर्षों में भी सूखी, रोगग्रस्त एवं आड़ी-तिरछी हटनियों को काटते रहना चाहिए। इसके साथ ही जलांकुरों की पहचान करके उनको भी हटा दें।

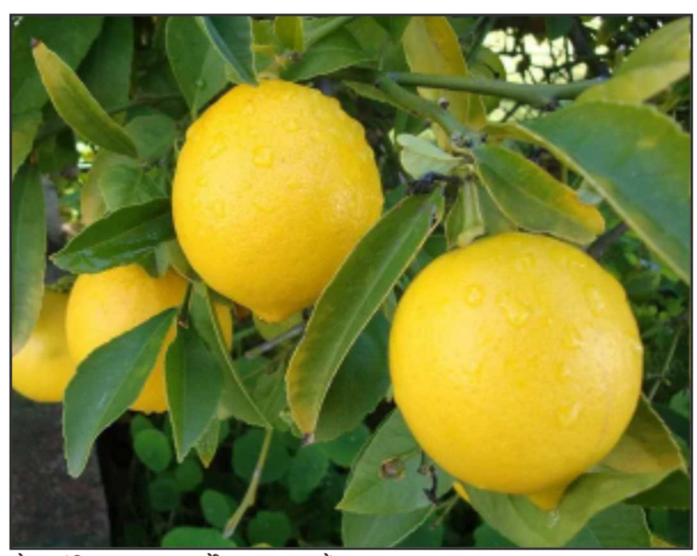

अंतः फसलीकरण :- रोपण के प्रारंभिक 2-3 वर्षों तक कतारों में खाली पड़ी जगह पर कोई उपयुक्त फसल लेकर कुछ आमदनी की जा सकती है। इसके लिए दलहनी फसलें या ऐसी सब्जियां जिसमें कीट/रोगों का आक्रमण कम होता हो, उगाना उपयुक्त होता है। दलहनी फसलों में मूंग, मटर, उड़द, लोबिया और चना आदि उगाकर आमदनी बढ़ने के साथ जमीन की उर्वरा शक्ति को भी बढ़ाने में मदद मिलती है।

फलों का फटना :- कागजी नींबू में वर्षा के मौसम में अक्सर फल फटने की समस्या देखी जा सकती है। फल प्रायः उस समय फटते हैं, जब शुष्क मौसम में अचानक वातावरण में आर्द्रता आ जाती है। अधिक सिंचाई या सूखे के लंबे अंतराल के बाद वर्षा का होना भी फल फटने का मुख्य कारण है। प्रारंभिक अवस्था में फलों पर छोटी दरारें बनती हैं, जो बाद में फलों के विकास के साथ बड़ी हो जाती हैं। इससे आर्थिक रूप से बहुत अधिक नुक्सान होता है। फलों को फटने से रोकने के लिए:

* उचित अंतराल पर सिंचाई करें।
* जिब्रेलिक अम्ल 40 पी.पी.एम. या एन.ए.ए. 40, पी.पी.एम. या पोटेशियम सल्फेट 8 प्रतिशत घोल।
* छिड़काव अप्रैल, मई एवं जून में करें।

तुड़ाई एवं उपज :- फलों की तुड़ाई का सही समय उगाई जाने वाली किस्म एवं मौसम पर निर्भर करता है। कागजी नींबू के फल 150-180 दिनों में पक्कर तैयार हो जाते हैं। फलों का रंग जब हरे से हल्का पीला होना शुरू हो जाए तो, फलों की तुड़ाई प्रारंभ कर देनी चाहिए। फलों को तोड़ते समय यह ध्यान रखें कि फलों के छिलके को किसी प्रकार का नुक्सान न पहुंचे। कागजी नींबू की किस्म, मौसम और प्रबंधन इत्यादि पर निर्भर करती है। सामान्यत 1000-1200 फल प्रति पौधा प्रति वर्ष मिल जाते हैं।

प्रमुख कीट एवं रोग :- नींबू में कई तरह के कीटों एवं रोगों का आक्रमण होता है। यदि सही समय पर इनकी पहचान करे उचित प्रबंधन नहीं किया जाये तो किसानों को बहुत आर्थिक नुक्सान उठाना पड़ता है। कागजी नींबू में लगने वाले कुछ हानिकारक कीट एवं रोग निम्नलिखित हैं:

कीट नियंत्रण :-

* मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. एक मि.ली. या क्विनालफॉस 25 ई.सी. 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
* पौधों की संख्या अधिक

शेष पृष्ठ 6 पर

प्लास्टिक प्रदूषण

कारगर वैकल्पिक समाधान दूर करेगा संकट

यदि वास्तव में पॉलीथीन का विकल्प तलाशना है तो पुराने कपड़ों के थैले बनवाना एकमात्र व्यावहारिक विकल्प है। इससे कई लोगों को रोजगार मिलेगा।

पंकज चतुर्वेदी

प्रधानमंत्री ने वर्ष 2019 में 'मन की बात' कार्यक्रम के माध्यम से देश को पॉलीथीन और प्लास्टिक से मुक्त करने का आह्वान किया था। इसके बाद कई राज्यों ने पर्यावरण के लिए घातक पॉलीथीन थैलियों पर पाबंदी लगाई। जनता मानती है कि पॉलीथीन हानिकारक है, लेकिन सुविधा या मजबूरी के चलते वही थैली दोबारा हाथ में आ जाती है। नगर निगमों का एक बड़ा बजट नालियों और सीवर की सफाई पर खर्च होता है, फिर भी परिणाम निराशाजनक रहते हैं क्योंकि इन

मलजल प्रणालियों में पॉलीथीन का अंबार जमा है।

दरअसल, उपयुक्त विकल्पों के अभाव में पॉलीथीन थैलियों का संकट बरकरार है। अब स्थिति इतनी भयावह हो गई है कि धरती, भूजल और समुद्री नमक तक में प्लास्टिक के अणु मिल चुके हैं। यह प्लास्टिक सूक्ष्म रूप में हमारे शरीर की रक्तवाहिनियों और श्वसन तंत्र तक में पहुंच चुका है और जीवन के लिए गंभीर संकट बन गया है।

विशाखापत्तनम से बस्तर जाने वाले मार्ग पर स्थित कोरापुट एक छोटा कस्बा है, जो पहाड़ों और हरियाली से घिरा हुआ है। शहर के बाहर पहुंचते ही सड़क किनारे प्लास्टिक की थैलियां, पानी की बोतलें और पैकेजिंग के कचरे बिखरे हुए दिखते हैं। बरसात के समय ये कचरे जमीन और खेतों में घुलकर जहर बन जाते हैं, जो अंततः मानव जीवन के लिए खतरा उत्पन्न करते है।

जनवरी, 2019 में केंद्र सरकार ने सिंगल-यूज प्लास्टिक पर प्रतिबंध लगाया, जिसका प्रभाव सामाजिक समारोहों और छोटे रेस्तरां तक दिखने लगा है, लेकिन पॉलीथीन पन्नी अभी भी बड़ी समस्या बनी हुई है। हाल के संसद सत्र में प्रस्तुत आंकड़ों के अनुसार, देश में हर साल 41.36 लाख टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न हो रहा है। पर्यावरण मंत्री ने बताया कि प्लास्टिक कचरे की मात्रा लगातार बढ़ रही है। सबसे अधिक प्लास्टिक कचरा तमिलनाडु में होता है, जहां वित्तीय वर्ष 2022-23 में 7.82 लाख टन कचरा उत्पन्न हुआ, जो दिल्ली से लगभग 50 प्रतिशत अधिक है। राज्य में प्लास्टिक पुनर्चक्रण की क्षमता 11.5 लाख टन प्रति वर्ष है, लेकिन केवल 33 प्रतिशत ही इसका उपयोग हो पाता है।

ईपीआर के संदर्भ में यह गौरतलब है कि दिल्ली में इस दौरान 4.03 लाख टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न हुआ। दूसरे स्थान पर 5.28 लाख टन प्लास्टिक कचरे के साथ तेलंगाना रहा। इस कचरे में बड़ी हिस्सेदारी पॉलीथीन बैग की है। हालांकि, यहां की राज्य सरकार ने प्लास्टिक कचरे पर पाबंदी लगाई हुई है। लेकिन यह पाबंदी अधिकतर कागजों तक ही सीमित है।

संसद को बताया गया कि देशभर में प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन इकाइयों (पीडब्ल्यूएमयू) की मात्र 978 इकाइयां है। विदित हो स्वच्छ भारत मिशन (ग्रामीण) के दूसरे चरण में प्रावधान है कि देश के प्रत्येक ब्लॉक में पीडब्ल्यूएमयू स्थापित की जाए और इसके लिए केंद्र सरकार 16 लाख की राशि मुहैया करवाएगी। चूंकि प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016 के अंतर्गत प्लास्टिक कचरे के संग्रहण व परिवहन के लिए स्थानीय निकायों और ग्राम पंचायत अधिंत है। लेकिन उनके पास न तो कर्मचारी हैं और न ही बजट। नगर निगम स्तर पर भी इस दिशा में कुछ काम हो नहीं पाया।

पॉलीथीन न केवल वर्तमान बल्कि भविष्य के लिए भी खतरा है। हालांकि, यह बीते दो दशकों में लाखों लोगों की आजीविका का स्रोत भी बना है, जो इसके उत्पादन, व्यापार और पुनः बिक्री से जुड़े हैं। इसके विकल्प के रूप में बाजार में आए सिंथेटिक थैले महंगे, कमजोर और पर्यावरण के लिए अच्छे नहीं हैं। कागज के बैग भी कुछ जगह मुफ्त बांटे गए, लेकिन उनकी आपूर्ति मांग के मुकाबले कम रही। यदि वास्तव में पॉलीथीन का विकल्प तलाशना है तो पुराने कपड़ों के थैले बनवाना एकमात्र व्यावहारिक विकल्प है। इससे कई लोगों को रोजगार मिलेगा। पॉलीथीन उत्पादन की छोटी इकाइयों में काम करने वाले कपड़ों के थैले बनाने में लग सकते है, व्यापारी इन्हें दुकानदार तक पहुंचा सकते हैं और आम लोग इसे सामान लाने-ले जाने के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं। हालांकि, पॉलीथीन जितनी मांग कपड़े के थैलों की नहीं होगी, क्योंकि थैलों का कई बार उपयोग होता है और उनकी कीमत व उत्पादन भी पॉलीथीन की तरह तेजी से नहीं बढ़ेगी।

सबसे बड़ी समस्या दूध, जूस और बनी हुई करी वाली सब्जी जैसे खाद्य पदार्थों के व्यापार की है। इसके लिए एल्यूमीनियम या मिश्रित धातु के खाद्य कंटेनर बनाए जा सकते हैं। यदि घर से अपने बर्तन ले जाने की आदत लौट आए, तो खाने का स्वाद और गुणवत्ता दोनों बनी रहेंगे। पॉलीथीन में पैक दूध या गर्म करी आपके पेट तक जहर पहुंचा सकती है। आजकल बाजार में माइक्रोवेव में गर्म करने लायक एयरटाइट बर्तन उपलब्ध है। प्लास्टिक के नुकसान को कम करने के लिए बायोप्लास्टिक को बढ़ावा देना चाहिए। बायोप्लास्टिक चीनी, चुकंदर, भुट्टा जैसे जैविक रूप से अपघटित होने वाले पदार्थों से बनती है। शुरुआत में पन्नी की जगह कपड़े के थैले और अन्य विकल्पों के लिए कुछ सब्सिडी दी जाए तो लोग अपनी आदत बदलने के लिए तैयार हो सकते हैं।

शेष पृष्ठ 5 की

कागजी नींबू की खेती

नहीं हो तो लटों को पौधों से चुनकर मृदा में दबा दें अथवा मिट्टी के तेल में डालकर मार दें।

लीफ माईनर :- इस कीट के लार्वा (सुंडी) पत्ती की निचली सतह पर चांदी के समान चमकीली, टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगें बना देते हैं। इससे प्रभावित पत्तियों के किनारे अंदर की तरफ मुड़कर सूखने लग जाते है। इसका प्रकोप भी नई पत्तियों पर अधिक होता है, जिससे पौधे की वृद्धि रूक जाती है। कीटों

की संख्या अधिक होने पर ये लक्षण पत्ती के ऊपरी भाग पर भी दिखाई देते हैं। यह नींबू में कैंकर रोग के फैलाव में भी सहायक होता है।

कीट नियंत्रण :- 750 मि.ली. ऑक्सीडेमेटान मिथाईल (मेटासिस्टाक्स) 25 ई.सी. या 625 मि.ली. डाइमेथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. या 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस (न्यूवाक्रान / मोनोसिल) 36 डब्लयू, एस.सी. को 500 लीटर पानी में प्रति एकड़ की दर से छिड़कें।

* अधिक प्रकोप होने की दशा में प्रभावित भागों को काटकर नष्ट कर दें एवं उसके पश्चात दवा का छिड़काव करें।

* बगीचे को हमेशा साफ-सुथरा रखें।

सिट्रस सिल्ला :- इस कीट के शिशु एवं वयस्क दोनों ही नई पत्तियों तथा पौधों के कोमल भागों से रस चूसते हैं। इसके परिणामस्वरूप प्रभावित भाग नीचे गिर जाते है और धीरे-धीरे टहनियां सूखने लग जाती हैं। ये कीट सफेद शहद जैसा चिपचिपा पदार्थ भी स्त्रावित करते है, जिसमें फफूंद का आक्रमण बढ़ जाता है। यह चिपचिपा पदार्थ जहरीला होता है, जिसके कारण पत्तियां सिकुड़ जाती हैं और फिर ये नीचे गिर जाती है। इसका प्रकोप भी वर्षा एवं बसंत ऋतु में अधिक होता है। यह कीट 'ग्रीनिंग' नामक रोग फैलाने में भी सहायक होता है।

कीट नियंत्रण :- * पौधे के ग्रसित भागों को काटकर दबा दें अथवा जला दें।

* फरवरी-मार्च, जून-जुलाई तथा अक्तूबर-नवंबर में या कल्लिका फूटते ही मोनोक्रोटोफॉस 0.7 मि.ली. या डायमेथोएट 0.8 मि.ली. या क्विनॉलफॉस 1 मि. मी. या एसीफेट 1 ग्राम दवा का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यकता हो तो यह छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर पुनः दोहरायें।

* कभी भी बगीचे के आसपास मीठे नीम का पौधा नहीं लगायें।

फल एवं फूलों का झड़ना :- वैसे तो नींबू के पौधों पर फूल बहुतायत में आते है तथा फल भी अच्छी संख्या में ही बनते हैं। परंतु-कई बार यह देखा गया है कि पुष्प या फल काफी संख्या में परिपक्व होने से पूर्व गिर जाते हैं। यह समस्या कई कारणों से आ सकती है, जिसमें पोषक तत्वों की कमी, कीट-रोगों का आक्रमण, वातावरणीय कारक, सिंचाई इत्यादि प्रमुख हो सकते हैं। फूल व फलों को झड़ने से बचाने के लिए कुछ प्रमुख उपाय निम्न है:

* पुष्प बनते समय सिंचाई कदापि न करें।

* संतुलित मात्रा में पोषक तत्वों का प्रयोग करें।

* फलों के झड़ने की समस्या के समाधान के लिए आरियोफिंजिन + 2,4-डी + जिंक सल्फेट के तीन छिड़काव, जोकि फल बनने के बाद, मई व इसके एक महीने के बाद करें।

इसके लिए 12 ग्राम आरियोफिंजिन + 6 ग्राम 2,4-डी+3 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट और 1.5 कि.ग्रा. चूने को 550 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

बगीचे की स्थापना :- नींबू के पौधे 6×6 या 5×5 मीटर की दूरी (कतार से कतार व पौधे से पौधे) पर लगाए जाते हैं। इस दूरी की दर से प्रति हैक्टेयर क्षेत्रफल में लगभग 277 से 400 पौधे लग जाते है। सर्वप्रथम जिस खेत में पौधे लगाने है उसकी अच्छी तरह जुताई करके समतल कर लें। उसके पश्चात उचित दूरी पर रेखांकन करके उन स्थानों पर 3×3×3 फुट व्यास के गड्ढों की खुदाई करें। गड्ढों से निकली ऊपरी भाग की मृदा में प्रत्येक गड्ढे की दर से 15-20 कि.ग्रा. गोबर की खाद मिलाकर गड्ढों को भर दें। दीमक की रोकथाम के लिए क्लोरोपायरीफॉस 20 मि.ली. दवा प्रति गड्ढे की दर से पानी में मिलाकर डालें। गड्ढा भरते समय ध्यान रखें कि यह धरातल से 15-20 सै.मी. ऊपर उठा हुआ हो। गड्ढा भरने के बाद सिंचाई कर दें अथवा वर्षा का इंतजार करें, जिससे पानी से गड्डे की मृदा नीचे बैठ जाए। पौधों का रोपण मौनसून के समय (जुलाई-अगस्त) में करते है, परंतु सिंचाई की पर्याप्त सुविधा होने पर यह कार्य फरवरी-मार्च में भी कर सकते है।

जुलाई माह के कृषि कार्य

फसलों में :

बाजरा :- संकर बाजरे की किस्में, एच.एच.बी.-50, एच.एच.बी.-60, एच.एच.बी.-94, एच.एच.बी.-67, एच.एच.बी.68 या कम्पोजिट किस्में, एच.सी.-4, एच.सी.-10 व डब्ल्यू.सी.सी.-75 ही बोयें। संकर बाजरे का बीज हर वर्ष नया ही लेकर बोयें। बीजाई के लिए जुलाई का दूसरा सप्ताह सबसे उत्तम समय है परन्तु बारानी इलाकों में मौनसून की पहली वर्षा होने पर ही बोयें। खेत को 2 या 3 बार जोतकर फौरन सुहागा लगाकर अच्छी तरह तैयार करें ताकि घास-फूस न रहे व नमी बनी रहे। बारानी क्षेत्रों में वर्षा से पहले खेत के चारों तरफ खूब मजबूत डोलें बनाएं ताकि खेत में पानी जमा हो जाए जो आगामी फसल के काम आएगा। एक एकड़ के लिए डेढ़ से दो किलो बीज चाहिए। खेत में सही उगाव के लिए बीजाई खूडों में इस तरह करें कि बीज के ऊपर 2 सैं.मी. से ज्यादा मिट्टी न पड़े। दो खूड्डों का फासला 45 सैं.मी. रखें। वर्षा के मौसम में मेढ़ों पर बीजाई करना अच्छा होता है। इस तरीके से बीजाई के लिए विश्वविद्यालय के शुष्क खेती अनुसंधान केन्द्र द्वारा निर्मित मेढ़ों पर बीजने वाले हल का प्रयोग करें। आम उपजाऊ व सिंचाई की सुविधा वाली भूमि में प्रति एकड़ 50 किलो नाइट्रोजन, 25 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट डाली जानी चाहिए। आधी नाइट्रोजन बीजाई के समय ड्रिल करें व शेष दो बार दें-एक छंटाई के समय व दूसरी सिट्टे बनते समय। असिंचित बाजरे में 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व 8 कि.ग्रा. फास्फोरस व जिंक सल्फेट बीजाई के समय पोरें।

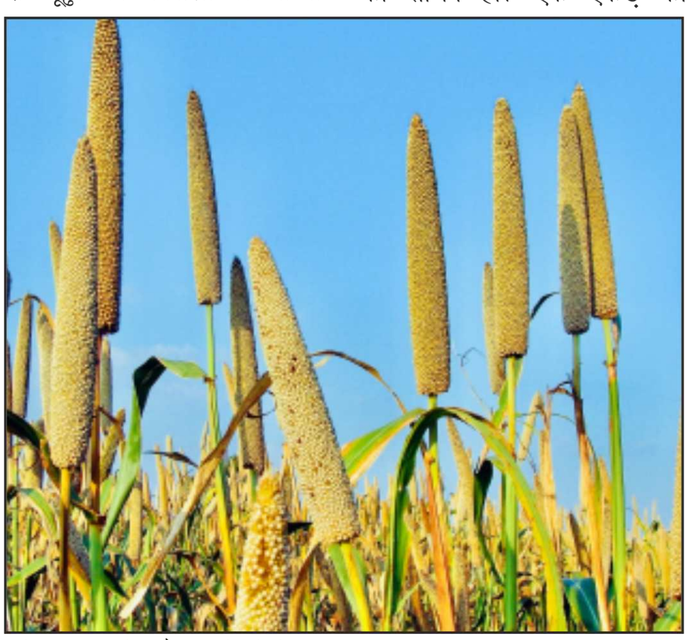

चेपा या अरगट रोग से बचाव हेतु बीज को 10 प्रतिशत नमक के घोल (10 लीटर पानी में 1 किलोग्राम नमक) में डुबो लें और ऊपर तैरते हुए पिण्डों व अन्य पदार्थों को पानी में 3-4 बार धोकर सुखा लें और 2 ग्राम एमिसान व 4 ग्राम थिराम प्रति किलोग्राम बीज के मिश्रण से बीजोपचार करके बीजाई करें। जैसे ही खेत में कोढ़िया या डाऊनी मिल्ड्यू दिखाई दे प्रभावित पौधे उखाड़ कर नष्ट कर दें और वहां स्वस्थ पौध रोप दें ताकि खेत में पौधों की संख्या पूरी बनी रहे। सफेद लट के नियंत्रण के लिए विश्वविद्यालय की सिफारिश के अनुसार मौनसून की वर्षा होते ही गांवों में अभियान चलायें।

पछेती दशा में बाजरे की रोपाई करने के लिए जुलाई माह के पहले सप्ताह में नर्सरी में क्यारियों में बीजाई करें। नर्सरी के लिए क्यारियां ऐसी जगह बनाएं जहां वर्षा के न होने पर भी सिंचाई के लिए पानी का साधन हो। एक एकड़ की रोपाई करने के लिए लगभग सवा कनाल क्षेत्र की नर्सरी में लगभग एक किलो उपचारित बीज बोयें। वर्षा की हालत में बीज छिटक कर तथा सूखी अवस्था में तंग कतारों में बोयें। नर्सरी में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। खेत में रोपाई के लिए लगभग तीन सप्ताह में पौध तैयार हो जाती है।

मक्का :- संकर मक्का की गंगा-5, अगेती-76 एच.एच.एम.-1, एच.एच.एम.-2 व विजय कम्पोजिट किस्में ही बीजें। इनकी बीजाई कतारों में 65 सैं.मी. की दूरी पर 10 जुलाई तक पूरी कर लें। साधारणतया 7.0 से 8.0 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ बीजाई के लिए काफी होता है। तना छेदक कीट से बचाव के लिए पहला छिड़काव फसल उगाने के 10 दिन बाद 200 ग्राम कार्बोरिल 50 घु.पा. या 250 मि.ली. एण्डोसल्फॉन 35 ई.सी. को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर करें। दूसरा छिड़काव पहले के 10 दिन पश्चात 300 ग्राम कार्बोरिल 50 घु.पा. 375 मि.ली. एण्डोसल्फॉन 35 ई.सी. को 300 लीटर पानी में मिलाकर करें। 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 25 कि.ग्रा. फास्फोरस, 25 कि.ग्रा. पोटाश, 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति एकड़ बीजाई पर पोरें। 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/एकड़ पौधों के घुटने तक बड़ा होने पर व इतना ही भुट्टे बनने से पहले दें।

धान :- धान की आई.आर.-64, एच.के.आर.-46, पी.आर.-106, जया, एच.के.आर.-120 व एच.के.आर.-126 की रोपाई 7 जुलाई तक पूरी कर लें। धान की अन्य किस्में पूसा-33, गोबिन्द, तरावड़ी बासमती, बासमती-370 व हरियाणा बासमती की रोपाई भी जुलाई के मध्य में पूरी कर लें। इससे ब्लास्ट या बदरा रोग कम लगता है। खेत में अच्छी तरह से पौध चलने के लिए व पानी बनाए रखने के लिए खेत को अच्छी तरह कद्दू करके एकसार कर लें। रोपाई के लिए 25-30 दिन पुरानी पौध प्रयोग करें। धान की रोपाई लाइनों में 15 सैं.मी. व पौधों में भी 15 सैं.मी. दूरी रखकर करें। एक जगह कम से कम 2-3 पौध सीधी लगाएं लेकिन 2-3 सैं.मी. से अधिक गहरी नहीं। कल्लर वाले खेतों में एक जगह कम से कम 3-4 पौध लगाएं। धान की बौनी मध्य अवधि वाली किस्मों जैसे जया, पी.आर.-106, एच.के.आर.-120, एच.के.आर.-126, में 60 किलोग्राम नाइट्रोजन, 24 किलोग्राम फास्फोरस, 24 किलोग्राम पोटाश व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ का प्रयोग करें जबकि कम अवधि वाली बौनी किस्मों जैसे आई.आर.-64, पूसा-33 व गोविन्द में व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट, 48 किलोग्राम नाइट्रोजन व ऊपर दी गई फास्फोरस, पोटाश व जिंक सल्फेट की मात्रा प्रयोग करें। नत्रजन की 1/3 मात्रा, फास्फोरस, पोटाश व जिंक सल्फेट की पूरी मात्रा रोपाई के समय खेत में डालें। 1/3 नत्रजन की मात्रा रोपाई के 21 दिन बाद और बाकी 1/3 नत्रजन की मात्रा रोपाई के 42 दिन बाद खेत में डालें। रोपाई पर डालने वाली 1/3 नत्रजन की मात्रा रोपाई के एक सप्ताह के अन्दर भी डाली जा सकती है। अगर खेत में ढैंचे की हरी खाद का प्रयोग किया गया है तो नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश की 2/3 मात्रा का ही प्रयोग करें। बासमती धान में 25 किलोग्राम नाइट्रोजन, 12 किलोग्राम फास्फोरस व 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट दें। नत्रजन की 1/3 मात्रा व फास्फोरस की पूरी मात्रा पौध लगाते समय दें। बाकी 1/3 मात्रा 21 दिन बाद व 1/3 मात्रा 42 दिन बाद दें। धान की फसल में सांवक और मोथा बहुतायत में पाए जाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए ब्यूटाक्लोर (मशेटी, डेलक्लोर ई.सी. व सिलकलोर नर्वदाक्लोर, कैपक्लोर, ट्रैप तीर हिल्टाक्लोर ई.सी.) 1.2 लीटर प्रति एकड़ 60 किलोग्राम सूखी रेत में मिलाकर पौध रोपण के 2-3 दिन उपरान्त 4-5 सैं.मी. गहरे पानी में एकसार बिखेर दें।

रोपाई के (6 से 10 दिन बाद) बाद जब पौधे ठीक प्रकार से जड़ पकड़ लें तो पानी रोक लें ताकि पौधों की जड़ें विकसित हो जाएं। एक बार में 5-6 सैं.मी. से अधिक गहरा पानी न लगाएं। धान की जड़ की सुंडी के आक्रमण से पौधे पीले हो जाते है व फुटाव भी कम होता है जिससे पौधे छोटे भी रह जाते है। इसके नियंत्रण के लिए 10 किलोग्राम कार्बोरिल 4-जी/ कार्बोफ्यूरॉन 3-जी प्रति एकड़ डालें। यदि पत्ता लपेट सुंडी का आक्रमण हो तो 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या 350 मि.ली. एण्डोसल्फॉन 35 ई.सी. या एक लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. को 200 लीटर पानी में प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें या फिर 10 किलोग्राम मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत प्रति एकड़ फसल पर धूड़ें।

कपास :- यदि कपास की बीजाई किसी कारण देरी से की हो तो जुलाई के पहले सप्ताह में फसल को पानी लगाएं तथा फालतू पौधों को निकाल दें जिससे कि एक कतार में पौधे से पौधे का फासला 30 सैं.मी. रह जाए। कोरणदार धब्बों से बचाव हेतु जुलाई के पहले सप्ताह में 6-8 ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लिन व कॉपर आक्सीक्लोराइड (600-800 ग्राम प्रति एकड़) को 150-200 लीटर पानी में मिलाकर 15-20 दिन के अन्तर पर लगभग 4 छिड़काव करें। नरमा में नाइट्रोजन 35 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की सिफारिश है। नाइट्रोजन की खाद आधी बौकी आने (जुलाई अन्त) के समय तथा आधी फूल आने के समय डालें। संकर किस्मों में इन दोनों समय पर 1/3 नाइट्रोजन की दर से डालनी चाहिए।

2,4-डी कपास के लिए घातक :- इसके प्रभाव से कपास की पत्तियों में बारीक कटाव (हथेली जैसा) आ जाता है, फूल गिर जाते हैं और टिण्डे नहीं बनते। इसलिए ध्यान रखें कि जिस स्प्रेयर से 2ख4-डी प्रयोग में लाया गया हो उसे बीमारी व कीड़े मारने वाली दवाओं के छिड़काव के लिए प्रयोग में न लाएं। साथ ही 2,4-डी का सम्पर्क कपास की फसल में प्रयोग में लाए जाने वाले कीटनाशियों और फफूंदनाशकों के साथ न होने पाए। कीट या फफूंदनाशकों के छिड़काव के लिए घोल बनाने से पूर्व बोतल या टीन का लेबल ध्यान से देख लें। 2,4-डी से प्रभावित पौधों का कोई इलाज नहीं है।

खरपतवार नियंत्रण के लिए पहली गुड़ाई पहली सिंचाई से पहला कसौला से करें। बाद में हर सिंचाई के बाद समायोज्य कल्टीवेटर से निराई-गुड़ाई करें। पहली सिंचाई जितनी देर से की जाए अच्छी है। आमतौर पर बीजाई के 40-45 दिन बाद सिंचाई करें।

हरा तेला की रोकथाम के लिए एक से दो छिड़काव 300-400 मि.ली. मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. या 40 या 250-300 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 150 से 175 लीटर पानी में मिलाकर 15 दिन के अन्तर पर प्रति एकड़ करें। पहला छिड़काव तब करें जब 20 प्रतिशत पूरे विकसित पत्ते किनारों से पीले होकर मुड़ने लगें। सफेद मक्खी का भी यही इलाज है।

शेष पृष्ठ 10 पर

दुधारू पशुओं का गर्मियों में उचित रख-रखाव

हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है। यहां पशुपालन सामान्यत: कृषि का एक महत्त्वपूर्ण अंग है, जो कि देश की अर्थव्यवस्था में मुख्य भूमिका अदा करता है। पिछले कुछ वर्षों से देश की कुल आय में कृषि का योगदान घट रहा है। वहीं पर पशुपालन से इसमें निरन्तर वृद्धि हो रही है। पशुधन क्षेत्र का कृषि उत्पाद में 25 प्रतिशत भाग है और अकेला डेयरी क्षेत्र इसमें दो-तिहाई योगदान करता है।

पशु संख्या की दृष्टि से भारत वर्ष में सम्पूर्ण विश्व की लगभग 15 प्रतिशत गाय एवं 55 प्रतिशत भैंसे हैं। हमारे देश में कुल डेयरी पशुओं की संख्या में भैंसों की संख्या लगभग एक-तिहाई है, पर देश के कुल दूध उत्पाद का लगभग 55 प्रतिशत भाग भैंसों द्वारा प्राप्त होता है यद्यपि दूध उत्पादन की दृष्टि से भारत विश्व का अग्रणी देश बन चुका है, परन्तु प्रति पशु दूध उत्पादन की दृष्टि से हम अभी भी बहुत पिछड़े हुए हैं। अपने पशुओं की उत्पादकता के स्तर को बढ़ाने की अत्यन्त आवश्यकता है, इसके लिए जरूरी है कि पशुओं के उचित रख-रखाव व प्रबन्धन पर विशेष ध्यान दिया जाए। भारत का उत्तर पश्चिमी भाग डेयरी व्यवसाय के लिए जाना जाता है। यहां विश्व की सर्वोत्तम भैंसों की नस्लें जैसे मुर्रा, नीली-रावी, सुरती, जाफराबादी व भदावरी आदि पाई जाती है। देश की गायों की दुधारू सर्वोत्तम नस्ले जैसे साहीवाल, रैड-सिंधी, गिर, थारपारकर आदि भी इसी क्षेत्र में पाई जाती हैं। भारत के उत्तर पश्चिमी क्षेत्र में मौसम की विषमताएं अत्यधिक देखने को मिलती है। यहां गर्मियां तेज व अत्यधिक समय तक होती है। गर्मियों में वायुमण्डलीय तापमान 45°C से भी अधिक हो जाता है, जो कि दुधारू पशुओं पर अपना अत्यधिक दुष्प्रभाव डालता है।

गर्मियों में दुधारू पशुओं पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव :-

1. गर्मियों में जब वायुमण्डलीय तापमान दुधारू पशुओं के शारीरिक तापमान से अधिक हो जाता है तो पशुओं के शरीर में उष्मा का उत्पादन कम होता है, इसके लिए पशु सुखा चारा

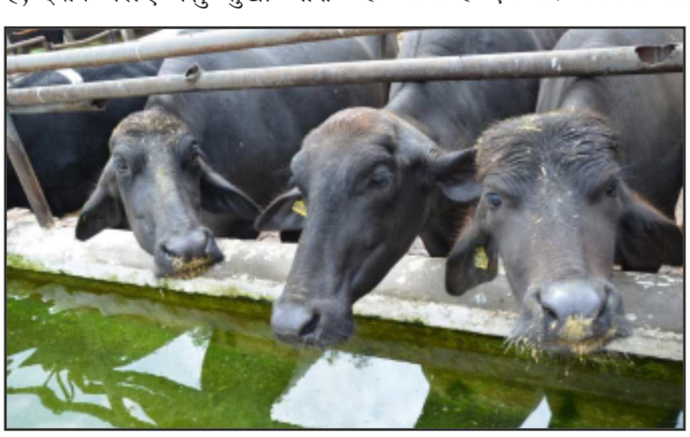

खाना कम कर देते हैं, क्योंकि सूखे चारे को पचाने में शरीर में उष्मा का उत्पादन अधिक होता है। ये कम चारा खाना उनकी दुग्ध उत्पादन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, क्योंकि कम चारा खाने के कारण दुग्ध उत्पादन के लिए आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध नहीं हो पाते हैं।

2. गर्मियों में शरीर की उष्मा को निकालने व अपने शारीरिक तापमान को स्थिर रखने के लिए पशु शरीर से पानी का पसीने के रूप में वाष्पीकरण करते हैं। पानी को शरीर से वाष्पित होने के लिए पशुओं को शरीर से उष्मा लेनी पड़ती है, जिससे पशुओं के शरीर का तापमान कम हो जाता है, पशु अपनी श्वसन क्रिया को बढ़ाकर पानी की वास्पीकरण क्रिया को बढ़ावा देते हैं। इन सबके कारण पशुओं की पानी की आवश्यकता गर्मियों में बढ़ जाती है।

3. गर्मियों के मौसम में पशुओं के दुग्ध उत्पादन में गिरावट आ जाती है, जिसका मुख्य कारण चरी की उपलब्धता व गुणवत्ता में कमी व पशुओं का गर्मियों में कम चारा खाना है। इसके अतिरिक्त पशु अपनी शारीरक ऊर्जा को दुग्ध उत्पादन की अपेक्षा अपने शारीरिक तापमान को सामान्य (38.6° सै.) बनाए रखने के लिए उपयोग में लाने को प्राथमिकता देती है। जिससे पशुओं की दुग्ध उत्पादन हेतु पर्याप्त ऊर्जा उपलब्ध नहीं हो पाती व उनके उत्पादन में कमी आ जाती है।

4. गर्मियों में दुधारू पशुओं खासकर भैंसों की प्रजनन क्रिया क्षीण (मंद) हो जाती है। उनके मद चक्र अवस्था का काल अधिक हो जाता है एवं मद अवस्था का काल व उग्रता भी मध्यम पढ़ जाती है। ऐसी स्थिति में अधिकतर पशु पालक अपने दुधारू पशुओं में मद काल की ठीक से पहचान नहीं कर पाते तथा पशु समय पर गर्भधान से वंचित रह जाता है। इस कारण पशुओं के पहले ब्यांत की आयु व एक ब्यांत से दूसरे ब्यांत में अंतर का समय भी बढ़ जाता है। परिणाम स्वरूप पशु काफी समय तक बिना दूध दिए रहते हैं। जिससे पशुपालक की अत्यधिक आर्थिक हानी होती है।

5. अत्यधिक गर्मी में पशुओं को लू लगने का खतरा बना रहता है। लू लगने से पशु बीमार पड़ जाते हैं, जिससे उनके दुग्ध उत्पादन में कमी तो आती ही है साथ ही बीमार पशु के इंलाज पर पशुपालकों को काफी खर्च करना पड़ता है। अगर पशु की समय पर उचित देखभाल न किया जाए तो बीमार पशु की मृत्यु तक हो जाती है, जिससे पशुपालक भाईयों को काफी आर्थिक हानि होती है।

गर्मियों में पशुशाला में मच्छर, मक्खी व परजीवियों का प्रकोप बढ जाता है, जिससे पशुओं के दुग्ध उत्पादन में गिरावट के साथ-साथ उनके बीमार होने का खतरा भी बढ़ जाता है।

अत: गर्मियों में होने वाले इन दुष्प्रभावों को कम करने के लिए पशुपालकों को निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान देना अति अवश्यक है।

1. पशुओं के लिए साफ-सुथरी व हवादार आवास की व्यवस्था होनी चाहिए। पशुगृह का फर्श पक्का व फिसलन रहित होना चाहिए तथा मूत्र व पानी के निकास हेतु उपयुक्त ढलान होने चाहिए। पशुगृह में पशुओं को सीधी धूप से बचने के लिए पर्याप्त छाया उपलब्ध होनी चाहिए।

2. पशुगृह की छत उष्मा की कुचालक हो, ताकि गर्मियों में अत्यधिक गरम न हो। अगर पशुगृह की छत पक्की या एस्वेस्टस सीट की बनी हो तो उस पर अधिक गर्मी के दिनों में 4 से 6 इंच मोटी घास-फूस की परत डाल देनी चाहिए। ये परत उष्मा अवरोधक का कार्य करती है, जिसके कारण पशुशाला के अंदर का तापमान कम बना रहता है।

3. सूर्य की रोशनी को परावर्तन करने हेतु पशुगृह की छत पर सफेद रंग करना या चमकीली एल्मोनियम शीट लगाना भी लाभप्रद पाया गया है।

4. पशुगृह छत की ऊंचाई कम से कम 10 फुट होनी आवश्यक है, ताकि हवा का समुचित संचार पशुगृह में हो सके तथा छत की तपन से पशुओं को बचाया जा सके।

5. पशुगृह की खिड़कियां व दरवाजों व अन्य खुली जगहों पर जहां से तेज गरम हवा आती हो, बोरी या टाट आदि टांग कर पानी का छिड़काव कर देना चाहिए।

6. पशुगृह में पंखों व कूलर आदि का उपयोग भी पशुओं को गर्मियों से बचाने हेतु लाभप्रद होता है। अत: पशुपालक भाई अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार इनका उपयोग कर सकते हैं।

7. पशुओं के आवास गृह में अधिक भीड़-भाड़ नहीं होनी चाहिए। प्रत्येक पशु को उसकी आवश्यकता के अनुसार पर्याप्त स्थान उपलब्ध कराएं। एक वयस्क पशु को चालीस से पचास वर्ग फुट स्थान की आवश्यकता होती है।

8. पशुगृह के आस-पास छायादार वृक्षों का होना आवश्यक है। यह वृक्ष पशुओं को छाया तो प्रदान करते ही हैं, साथ ही उन्हें गरम लू से भी बचाते हैं।

9. पशुओं के शरीर पर दिन में तीन या चार बार जब वायुमंडल का तापमान अधिक हो तो ठण्डे पानी का छिड़काव करें। इस कार्य के लिए पशुशाला की छत के साथ में पानी छिड़कने की प्रणाली को लगाया जा सकता है। अगर पशु कम है तो पशुपालक भाई पाईप व बाल्टी आदि का उपयोग कर पशुओं पर छिड़काव कर सकते हैं। यदि संभव हो तो अत्यधिक गर्मी में भैंसों को तालाब व पोखर में ले जाएं। प्रयोगों से यह साबित हुआ है कि दोपहर को पशुओं पर ठण्डे पानी का छिड़काव उनके उत्पादन व प्रजनन क्षमता को बढ़ाने में सहायक होता हैं।

10. गर्मियों में ज्यादातर दुधारू पशु सायंकाल 6 बजे से प्रात: सात बजे की अवधि में मद में आती हैं। खासकर भैंसे रात्रि के 12 बजे से सुबह 5 बजे के मध्य मदावस्था के लक्षण प्रदर्शित करती हैं। अकसर पशुपालक इस मदकाल को नहीं पहचान पाते और पशु गर्भित होने से रह जाते है। ऐसे पशुओं की जांच के लिए एक नपुंसक सांड का इस्तेमाल कर सकते है एवं पशु मदकाल या गर्मी में होगा, उस पर सांड गर्भाधान हेतु चड़ेगा। जब यह सुनिश्चित हो जाए कि अमुक पशु मदकाल में है तो यथास्मय प्राकृतिक या कृत्रिम विधि द्वारा उस पशु का गर्भाधान कराएं। मदकाल के मध्य समय से आखरी एक तिहाई समय में पशुओं का गर्भाधान कराना सफल प्रजनन हेतु अत्यन्त आवश्यक है। एक ही समय पर कई बार गर्भित कराना प्राय: निरर्थक होता है।

11. पशु गर्मियों में चारा चरना कम कर देते है अत: पशुओं को चारा प्रात: या सायंकाल में ही उपलब्ध कराना चाहिए। जहां तक संभव हो दुधारू पशुओं के आहार में हरे चारे की मात्रा अधिक रखें। यदि पशुओं को चारागाह में ले जाते है तो प्रात: व सायंकाल को ही चराना चाहिए।

12. दुधारू पशुओं को पीने के लिए हमेशा स्वच्छ व ठण्डा पानी उपलब्ध कराना चाहिए, इसके लिए पानी के टैंक पर छाया की व्यवस्था हो। पानी की पाईपों को खुली धुप से न गुजारे तथा जहां तक हो सके पानी की पाईपे जमीन के अन्दर बिछी होनी चाहिए ताकि पानी को दिन में गरम होने से बचाया जा सके। अगर जमीन का पानी पीने के लिए उत्तम है तो ट्यूबवैल (बोर) का ताजा पानी पशुओं को पीने के लिए उपलब्ध कराना चाहिए।

13. पशुओं को गर्मियों के दिनों में जब हरे चारे की कमी होती है तो 40-50 ग्राम खनिज लवण प्रति पशु की दर से आहार में उपलब्ध कराना चाहिए।

14. गर्मियों में पशुशाला में बाहरी परजीवियों जैसे मच्छर, मक्खी, जुएं, चिचड़ियां आदि के प्रकोप को कम करने के लिए पशु पालकों को पशुशाला की साफ-सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए। पशुगृह जितना स्वच्छ व आरामदेह होगा। उतना ही उत्पादन बेहतर होगा। पशुशाला की सफाई दिन में कम से कम दो बार होनी चाहिए तथा सप्ताह में एक बार फिनाइल के घोल से पशुशाला के फर्श की सफाई करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त बाहरी परजीवियों की रोकथाम हेतु महीने में एक बार उपयुक्त कीट नाशक दवा का छिड़काव सभी पशुओं एवं पशुशाला में पशु चिकित्सक के परामर्श पर अवश्य करना चाहिए।

15. दुधारू पशुओं को विभिन्न संक्रामक रोगों जैसे गल घोटू, खुरपका-मुंह पका रोग, टी.बी. ब्रुसलोसिस आदि के रोग अवरोधक टीके पशु चिकित्सक से परामर्श कर अवश्य लगवाएं। अगर पशु बीमार हो जाए तो उसे तुरन्त स्वस्थ पशुओं से अलग कर देना चाहिए तथा किसी योग्य पशु-चिकित्सक द्वारा उपयुक्त इलाज कराएं। पशुओं को आंतरिक परजीवियों से बचाने हेतु दवा भी समय-समय पर दिलवाएं।

16. पशुपालक भाई उपरोक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए, गर्मियों को मौसम में अपने दुधारू पशुओं का रख-रखाव व पालन करेंगे तो निश्चित ही वे अपने पशुओं को ग्रीष्म ऋतु में होने वाली विभिन्न समस्याओं से बचा सकते है तथा उनके उत्पादन व प्रजनन क्षमता को बनाए रखते हुए डेयरी व्यवसाय से निरंतर अच्छी आय प्राप्त कर सकेंगे।

मक्के की फसल में जल प्रबन्ध

अमित भटनागर, सस्य विज्ञान विभाग; एम.एस. पाल, सस्य विज्ञान विभाग; वीर सिंह, मृदा विज्ञान विभाग; दिनेश कुमार सिंह, सस्य विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान केन्द्र, ढकरानी, देहरादून (उत्तराखण्ड)

खरीफ ऋतु में उगायी जाने वाली फसलों में धान के बाद मक्का का प्रमुख स्थान है। मक्का का अधिकांश भाग वर्षाधीन होने से इसकी खेती वर्षा पर निर्भर है। यह फसल ज्वार, बाजरा आदि की भांति सूखे को सहन नहीं कर पाती है। अतः कम वर्षा होने की स्थिति में इसमें सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। वहीं दूसरी ओर अधिक वर्षा होने पर अदिक पानी से इसकी उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः मक्के की फसल में जल प्रबन्ध अति महत्वपूर्ण कार्य है।

हमारे देश में खरीफ ऋतु में उगायी जाने वाली फसलों में मक्का का प्रमुख स्थान है। मक्का को अन्य फसलों की अपेक्षा पानी की अधिक आवश्यकता होती है। हमारे देश में मक्का का अधिकांश क्षेत्रफल वर्षाधीन है। मौनसून के अनियमित हो जाने से फसल की जल की आवश्यकता की पूर्ति सिंचाई से करनी होती है। सिंचाई के सही तरीके से न करने के कारण मक्के की बढ़वार व उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। मक्के की फसल अधिक पानी को सहन नहीं कर पाती है। खेत में जल निकास न होने से पानी भर जाने के कारण मक्का की फसल नष्ट हो जाती है। अत: मक्के की फसल में जल प्रबन्ध इस प्रकार करना चाहिए कि न तो खेत में पानी की कमी हो और न ही जल भराव की समस्या हो। इस दृष्टि से मक्का में जल प्रबन्ध अति महत्वपूर्ण कार्य है। इसके अभाव में मक्के की उपज में बहुत कमी आ जाती है।

खरीफ ऋतु में उगायी जाने वाली फसलों में धान के बाद मक्का का प्रमुख स्थान है। मक्का का अधिकांश भाग वर्षाधीन होने से इसकी खेती वर्षा पर निर्भर है। यह फसल ज्वार, बाजरा आदि की भांति सूखे को सहन नहीं कर पाती है। अत: कम वर्षा होने की स्थिति में इसमें सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। वहीं दूसरी ओर अधिक वर्षा होने पर अधिक पानी से इसकी उपज पर प्रतिकूल

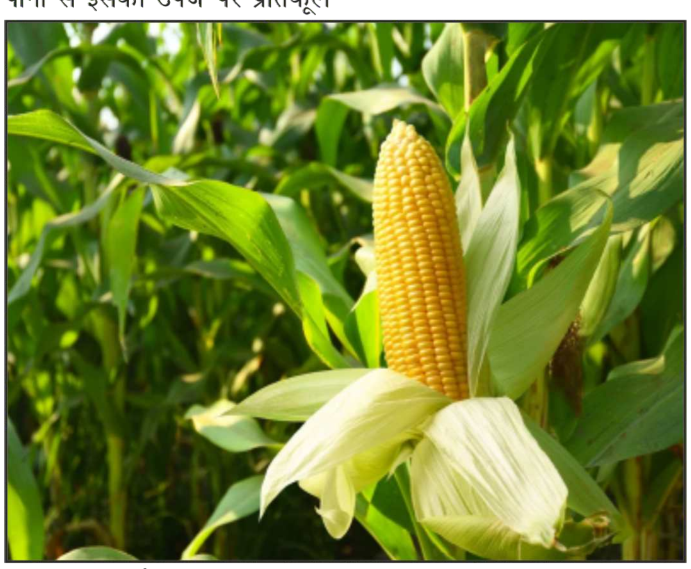

प्रभाव पड़ता है। अत: मक्के की फसल में जल प्रबन्ध अति महत्वपूर्ण कार्य है। सिंचाई के साथ-साथ जल निकास की बहुत आवश्यकता होती है। ऐसा देखा गया है कि जल निकास न होने से खेत में जल भराव की स्थिति में दो-तीन दिन में ही फसल नष्ट हो जाती है। अत: मक्के में जल निकास सिंचाई से भी ज्यादा महत्वपूर्ण है। मक्के में उचित जल प्रबन्ध करके अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

सिंचाई प्रबन्ध :- मक्का को अपने पूरे जीवनकाल में 400-600 मि.मी. जल की आवश्यकता होती है। यदि इसकी पूर्ति वर्षा से हो जाये तो इसमें सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। लेकिन फसल अवधि में वर्षा कम हो तो सिंचाई करनी पड़ती है। सिंचाई पूरे खेत में समान रूप से हो इसके लिए खेत को बुवाई से पूर्व समतल करना आवश्यक है। अन्यथा सिंचाई के समय खेत का कुछ भाग सूखा रह जाता है तथा कुछ भागों में अधिक पानी लगने से पानी भर जाता है। खेत को समतल बनाने से सिंचाई पूरे खेत में अच्छे ढंग से होती है तथा फसल सिंचाई के पानी को बेहतर ढंग से उपयोग करती है।

यदि बुवाई मेड़ों पर की जाये तो सिंचाई करने में सुविधा होती है तथा पानी भी कम लगता है। अत: कोशिश यह करनी चाहिए कि बुवाई मेड़ों पर करें। मेड़ों के बीच बनी नालियों का उपयोग सिंचाई के साथ-साथ जल निकास के लिए भी कर सकते हैं। यह बुवाई का सर्वोत्तम तरीका है।

यदि बुवाई मेड़ बनाकर सम्भव न हो तो समतल खेत में बुवाई पंक्तियों में करने के 25-30 दिन बाद पौधों पर मिट्टी दोनों ओर से चढ़ा दें। इससे पंक्तियों के बीच में नालियां बन जायेंगी। न पंक्तियों में सिंचाई करने से पौधों की बढ़वार अच्छी होती है साथ ही साथ पानी का भी पूरा उपयोग होता है।

मक्के की फसल को 10-15 दिन के अन्तर पर 5-6 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। यदि समय-समय पर वर्षा होती रहे तो सिंचाई करने की जरूरत नहीं होती है। मक्का में निम्नलिखित अवस्थाओं में पानी की आवश्यकता बहुत अधिक होती है। अत: इन अवस्थाओं में सिंचाई करके मृदा नमी बनाई रखनी चाहिए।

1. जब पौधे में 4-6 पत्तियां आ जायें।
2. पौधे जब घुटने की ऊंचाई के बराबर हो जायें।
3. पौधों में नर मंजरी निकलते समय।
4. जब भुट्टे निकल रहे हों।
5. दानों में दूध पड़ते समय।

यदि इन अवस्थाओं में मृदा में पानी की कमी हो तो फसल की उपज में काफी कमी आ जाती है। अत: इन अवस्थाओं में वर्षा न होने की स्थिति में सिंचाई करके पानी की पूर्ति करनी चाहिए। पानी की दृष्टि से मक्का की सबसे क्रांतिक अवस्था भुट्टे निकलते समय है। अत: इस अवस्था में सिंचाई अवश्य करके मृदा नमी बनायें रखें अन्यथा उपज में बहुत कमी आ जाती है।

सिंचाई के समय खेत में पानी 5-6 से.मी. (लगभग 2 इन्च) की गहराई तक लगायें। अधिक गहराई तक पानी लगाने से खेत में पानी भरने की सम्भावना रहती है। जिसका प्रतिकूल प्रभाव फसल की बढ़वार व उपज पर पड़ता है।

सिंचाई पूरे खेत में एकसमान हो, इसके लिए खेत को सुविधानुसार 25-30 मीटर लम्बी तथा 10-15 मीटर चौड़ी पट्टियों में बांट लिया जाता है तथा ऐसी 2 पट्टियों के बीच 1-1.5 मीटर चौड़ी नालियां बनायी जाती हैं। इन नालियों का उपयोग सिंचाई के लिए करते हैं। इन पट्टियों के चारो तरफ मेड़ बनायी जाती है ताकि सिंचाई के समय पानी खेत से बाहर न जाये तथा सिंचाई समान रूप से हो सके। यदि खेत में पट्टियां न बनाई जायें तो सिंचाई अच्छे ढंग से नहीं हो पाती है तथा सिंचाई का पानी बर्बाद हो जाता है

सिंचाई पट्टियों में क्रमवार करनी चाहिए। पहले एक पट्टी में सिंचाई करें जब पानी 5-6 से. मी. भर जायें, तब दूसरी पट्टी में सिंचाई करनी चाहिए।

इस प्रकार सिंचाई करने से पूरे खेत में समान रूप से पानी

लगता है। यदि बुवाई मेड़ों पर की गई है, तब सिंचाई करते समय पंक्तियों के बीच बनी नालियों को पूरा भरने की आवश्यकता नहीं होती है। पानी मेड़ की ऊंचाई के दो तिहाई (2/3) भाग तक लगायें।

सिंचाई समय से न करने से मृदा में नमी की कमी आ जाती है तथा मक्के के पौधों पर निम्न लक्षण दिखाई देते है :-

1. पत्तियां मुरझाकर मुड़ने लगती है तथा ज्यादा कमी होने पर पूरा पौधा सूख जाता है।
2. पत्तियों का रंग हल्का हरा होकर पीला होने लगता है।
3. पौधे की बढ़वार रूक जाती है तथा पौधे छोटे रह जाते हैं।
4. नरमंजरी का आकार छोटा रह जाता है तथा परागकण बहुत कम बनते हैं।
5. भुट्टे या तो निकलते ही नहीं है यदि निकलते भी हैं तो उनमें दानें नहीं बनते हैं।

जल निकास :- मक्के की फसल जल भराव की स्थिति में नष्ट हो जाती है। अत: इसमें जल निकास अति महत्वपूर्ण है। अधिक वर्षा होने पर खेत में पानी भर जाने से मक्का की फसल पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, इसलिए निचले क्षेत्रों में जहां पानी भरता हो वहां मक्का को न उगायें। खेत को समतल करके ही बुवाई करें अन्यथा निचले भागों में पानी जमा हो जायेगा। जल निकास के लिए वही तरीका अपनाते है, जो सिंचाई के लिए करते है। पंक्तियों में बुवाई करके पौधों पर दोनों ओर से मिट्टी चढ़ायें। ऐसा करने से पंक्तियों के बीच बनी नालियों का उपयोग अतिरिक्त पानी को खेत से बाहर निकालने के लिए किया जा सकता है। इसी प्रकार मेड़ों पर बुवाई करके मेड़ों के बीच नालियों का उपयोग जल निकास के लिए कर सकते हैं। इस प्रकार नालियों का उपयोग कम वर्षा होने पर सिंचाई के लिए करते है तथा अधिक वर्षा होने पर जल निकास के लिए करते हैं।

नालियों को आपस में जोड़कर खेत का अतिरिक्त पानी बाहर निकाल देना चाहिए। जल भराव का सबसे अधिक कुप्रभाव मक्का के पौध अवस्था पर पड़ता है। अत: इस अवस्था में खेत में पानी बिलकुल न रूकने दें।

ऐसी स्थिति से बचने का उपाय यह है कि बुवाई मौनसून आने से 15-20 दिन पहले कर दें ताकि वर्षा आने तक पौधों में जड़ तंत्र तथा प्ररोह तंत्र अच्छी तरह विकसित हो सके। इस प्रकार मजबूत पौधे कुछ हद तक जल भराव को सहन कर लेते हैं।

जहां जल भराव होने की सम्भावना हो वहां बुवाई हमेशा मेड़ों पर ही करें। इससे पौधों पर जल भराव से होने वाले कुप्रभाव को कम किया जा सकता है। खेत में अगर पानी रूक गया है तो पानी निकालकर 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें। ऐसा करने से पौधों की वृद्धि दर को बढ़ाया जा सकता है। यूरिया के दो प्रतिशत घोल का भी पौधों पर छिड़काव किया जा सकता है।

खेत में जल भराव होने से पौधे में तना वृंत विगलन रोग का जीवाणु पानी के साथ तेजी से फैलता है, इस रोग से पौधे का तना जमीन के पास से सड़ जाता है तथा पौधे नीचे गिर जाते हैं। जल निकास करके इस रोग के प्रकोप से बचा जा सकता है।

जल भराव होने से पौधों पर निम्न लक्षण दिखाई देते हैं :-

- पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं तथा पूरा पौधा पीला हो जाता है।
- पौधों की वृद्धि रूकने से बढ़वार कम हो जाती है।
- जमीन के पास से तने से वायुवीय जड़े निकलने लगती है।
- नरमंजरी तथा भुट्टे देर से निकलते हैं।

शेष पृष्ठ 10 की

जुलाई माह के कृषि कार्य

यदि बालों वाली सुंडी, पत्ता लपेट सुंडी, कुब्बड़ कीड़े या चित्तीदार सुंडी का भी आक्रमण हो तो ऊपर वाली किसी एक दवाई में 600-800 मि.ली. एण्डोसल्फॉन 35 ई.सी. या 500-700 ग्राम कार्बोरिल 50 प्रतिशत घु.पा. या 500-700 मि.ली. फैनीट्रोथियान (फोलिथयान / सुमिथियान) 30 ई.सी. को मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। जुलाई तक जो फूल आते हैं उनको नष्ट कर देना चाहिए क्योंकि ये टिण्डे की सुंडियां पनपने में सहायता करते हैं।

मूंगफली :- मूंगफली की बीजाई इस माह के मध्य तक पूरी कर लें। मूंगफली एम.एच.-2 व एम.एच.-4 की बीजाई कतारों में

15×15 सैं.मी. पर तथा एम.एच. -1, एम-145 व एम-13 की 30×15 सैं.मी. पर करें। बीज 'केरा' विधि से खूडों में 5 सैं.मी. की गहराई पर डालें। एम.एच.-2 व एम-13 के लिए 60 किलो तथा एम.एच. -1 व एम-145 के लिए 48 किलो व एम.एच.-4 के लिए 32 किलो गिरी एक एकड़ के लिए काफी होगी। बोने से पूर्व स्वस्थ गिरियों का एमिसान 2 ग्राम या कैप्टान या थिराम 3 ग्राम प्रति किलो बीज से उपचार करें। सफेद लट व दीमक से फसल को बचाने के लिए 20 मि.ली. क्लोरोपायरीफॉस 20 ई. सी. या क्विनलफॉस 25 ई.सी. प्रति किलो बीज का बुवाई से 4-5 घंटे पहले उपचार करें। मूंगफली में 6 किलो नाइट्रोजन, 20 किलो फास्फोरस, 10 किलोग्राम पोटाश व 10 किलोग्राम ज़िंक सल्फेट/एकड़ बीजाई के समय ड्रिल करें।

बीजाई के 25 से 45 दिन बाद से निराई-गुड़ाई खरपतवार नियंत्रण के लिए करें। पहली सिंचाई 30-35 दिन बाद तथा एक सिंचाई फूल आने पर करें।

मूंग, उड़द व लोबिया :- मूंग आशा, के-851 व मुस्कान, उड़द टी-9 तथा लोबिया एफ.एस.

-68 किस्में बोएं। मूंग व उड़द के लिए 8 किलोग्राम तथा लोबिया के लिए 12 किलोग्राम प्रति एकड़ बीज डालें और बीज गलन व पौध अंगारी से बचाव हेतु बीज में 4 ग्राम थिराम प्रति किलोग्राम बीज मिलाएं। बीजाई जुलाई के पहले पखवाड़े तक 45 सैं.मी. की दूरी पर कतारों में करें। दो बार निराई-गुड़ाई करें।

इन सभी दलहनी फसलों में बीजाई के समय 6-8 किलो नाईट्रोजन प्रारम्भिक मात्रा के रूप में तथा 16 किलो फास्फोरस प्रति एकड़ खेत में पोर दें। सभी फसलों को राइज़ोबियम के टीके से उपचारित करके बोएं।

सोयाबीन :- सोयाबीन की पी.के.-416, पी.के.-564 व पी.के. -472 किस्में हरियाणा के लिए उत्तम हैं। इसकी बीजाई जून के आखिरी या जुलाई के प्रथम सप्ताह में करें। प्रति एकड़ राइज़ोबियम के टीके से उपचारित 30 किलोग्राम बीज डालें। बीजाई लाईन से लाईन का फासला 45 सैं.मी. रखकर ढाई सैं.मी. गहरी करें। अधिक उपज पाने के लिए 10 कि.ग्रा. नाईट्रोजन तथा 32 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति एकड़ बीजाई के समय डालें। 15 से 35 दिन बाद इसकी निराई-गुड़ाई करें।

अरहर :- अरहर की कम समय में पकने वाली यू.पी.एस.-120 या मानक या पारस की बीजाई शीघ्र ही जुलाई के प्रथम सप्ताह में पूरी कर लें। एक एकड़ के लिए लगभग 5-6 किलो बीज डालें। इन सभी किस्मों की बीजाई कतारों में 40 सैं.मी. की दूरी रख कर करें। बीज को राइज़ोबियम के टीके से उपचारित करके ही बोयें तथा 8 किलोग्राम नाईट्रोजन व 16 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति एकड़ बीजाई के समय डालें।

गन्ना :- अगोला बेधक कीट के लिए जून में कीटनाशी न डाली हो तो अब तुरन्त 13 किलो फ्यूराडॉन 3-जी या 4 किलो फोरेट 10-जी को खाद के साथ मिलाकर प्रति एकड़ डालें व इसके तुरन्त बाद एक हल्की सिंचाई करें। यदि नाइट्रोजन खाद की शेष आधी मात्रा लगानी रहती है तो उसे पूरा कर लें।

तिल :- हरियाणा तिल नं.1 को जुलाई के पहले पखवाड़े में 4 सैं.मी. गहराई व 30 सैं.मी. का फासला रखकर खूडों में बोयें। दो किलोग्राम प्रति एकड़ बीज प्रयोग करें। बीजाई से पूर्व प्रति किलोग्राम बीज में 3 ग्राम कैप्टान या थिराम मिलाकर बीजाई करें। कम उपजाऊ व हल्की ज़मीनों में 15 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ बीजाई से पहले ड्रिल करें।

सब्ज़ियों में :

टमाटर :- वर्षा ऋतु की फसल की रोपाई के लिए खेत तैयार करें। 10 टन गोबर की गली-सड़ी खाद एक एकड़ खेत में बिखेर कर जुताई कर दें। इसके बाद खेत को क्यारियों में बांट लें तथा पौध लगाने के स्थान पर प्रति एकड़ 125 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट (20 किलोग्राम फास्फोरस) तथा 60 किलोग्राम किसान खाद (15 किलोग्राम नाइट्रोजन) दें। पोटाश की कमी वाले खेत में लगभग 35 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश (20 कि.ग्रा. पोटाश) प्रति एकड़ दें। तैयार खेत में पौध रोपण शाम के समय ही करें। पौधों को लाईन में 60-75 सैं.मी. की दूरी पर लगाएं तथा पौधे से पौधे का फासला 45-60 सैं.मी. रखें। इसकी उन्नत किस्में, जैसे हिसार अरूण, हिसार लालिमा, हिसार ललित ही प्रयोग में लायें। जिन स्थानों पर सूत्रकृमि की शिकायत हो वहां पर हिसार ललित नामक किस्म ही प्रयोग करें।

पुरानी फसल में फल छेदक कीड़े की रोकथाम के लिए 500 ग्राम कार्बोरिल 50 घु.पा. या 500 मि.ली. एण्डोसल्फॉन 35 ई.सी. को 250 लीटर पानी मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। कीट ग्रस्ति फलों को इक्ट्ठा करके नष्ट कर दें।

रस चूसने वाले कीड़े, जैसे सफेद मक्खी, हरा तेला व माईट आदि की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 15 दिन के अन्तर पर छिड़कें।

बैंगन :- बैंगन की पिछली फसल के कच्चे फलों को तोड़कर बाज़ार बेचने के लिए भेज दें। फलों को तोड़ने के लिए किसी

चाकू या तेज़ धार वाले औज़ार का प्रयोग करें जिससे कि तोड़ते समय पौधों को क्षति न हो। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। फल व तना छेदक कीड़े के लगने पर ग्रस्ति फलों को तोड़कर नष्ट कर दें व इसके बाद 500 मि.ली. एण्डोसल्फॉन 35 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बोरिल 50 घु.पा. को 250 लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अन्तर पर एक एकड़ खेत पर आवश्यकतानुसार छिड़कें। दवा प्रयोग करने के बाद फलों को 8-10 दिन तक खाने के काम में न लायें। वर्षा ऋतु की फसल के लिए खेत की तैयारी करें। इसकी उन्नत किस्मों, बी.आर.-112, हिसार श्यामल, हिसार प्रगति को प्रयोग में लायें। नर्सरी की पौध इस महीने तक तैयार हो जाएगी। खेत को तैयार कर क्यारियों में बांट लें। एक एकड़ खेत में लगभग 10 टन गोबर की खाद बिखेर दें और जुताई कर दें। पौध रोपण से पहले 60 कि. ग्रा. किसान खाद (15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन), 125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट (20 कि.ग्रा. फास्फोरस) तथा 17 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश (10 कि.ग्रा. पोटाश) प्रति एकड़ दें। लाईनों का फासला लम्बी किस्मों में 60 सैं.मी. तथा गोल किस्मों में 75 सैं.मी. रखें। पौधे से पौधे की दूरी 60 सैं.मी. रखें। पौध रोपण के बाद सिंचाई अवश्य करें। विषाणु रोग से बचाव के लिए शुरू से ही कीटनाशक दवायें प्रयोग में लें।

हरा तेला, सफेद मक्खी, गोभ व फल छेदक कीड़े आदि बैंगन की फसल में नुकसान पहुंचाते हैं। रस चूसने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए 300-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ फसल पर छिड़कें। फल लगने शुरू होते ही 400-600 मि.ली. एण्डोसल्फॉन 35 ई.सी. तथा 400-600 ग्राम कार्बोरिल 50 घु. पा. को बारी-बारी से 250 से 300 लीटर पानी में प्रति एकड़ छिड़कें ताकि फल छेदक का नियंत्रण भी हो जाए।

फूलगोभी अगेती :- इसके लिए एक एकड़ खेत में लगभग 20 टन गोबर की सड़ी खाद मिलाएं तथा पौध रोपण से पहले 60 कि. ग्रा. किसान खाद (15 कि.ग्रा. नाईट्रोजन), 125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट (20 कि.ग्रा. फास्फोरस) तथा 35 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश (20 कि.ग्रा. पोटाश) की दर से मिला कर खेत को समय पर तैयार करें। अगेती फूलगोभी (पूसा कातकी) की पौध इस माह तैयार हो जाएगी। अच्छा होगा कि हल्की डोलियां बना लें जिससे कि अधिक वर्षा में पौध खराब न हो। पौध रोपण लाईनों में 45 सैं.मी. की दूरी पर करें और पौधे की दूरी 30 सैं.मी. रखें। पौध रोपण शाम के समय करें तो उचित रहेगा। वर्षा न होने पर सिंचाई करें।

मिर्च :- मिर्च की गर्मी की फसल की तुड़ाई करके बाज़ार भेजें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें। हरा तेला, सफेद मक्खी, माईट तथा रस चूसने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ शुरू से ही 15 दिन के अन्तर पर

छिड़कें। इस दवाई से विषाणु रोग की रोकथाम हो सकती है क्योंकि सफेद मक्खी रोग फैलाती है। रोगग्रस्ति पौधों को निकाल कर नष्ट कर दें। मिर्च की पौध इस माह तैयार हो जाएगी। अत: रोपाई का प्रबन्ध करें। मिर्च के खेत की तैयारी के लिए 10 टन गोबर की खाद प्रति एकड़ की दर से बिखेर दें। खेत को उचित नाप की क्यारियों में बांट लें। पौध रोपण से पहले 60 कि.ग्रा. किसान खाद (15 कि. ग्रा. नाइट्रोजन), 75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट (13 कि.ग्रा. फास्फोरस) और 20 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश (12 कि.ग्रा. पोटाश) प्रति एकड़ की दर से खेत में मिला दें। तैयार खेत में शाम के समय पौध रोपण करें। पौध रोपण के बाद सिंचाई अवश्य करें।

भिण्डी :- भिण्डी की गर्मी की फसल को कीड़ों जैसे हरा तेला व फल छेदक से बचाने के लिए 500 ग्राम कार्बोरिल 50 घु. पा. या 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर बारी-बारी 15 दिन के अन्तर पर प्रति एकड़ छिड़काव करते जायें। दवा छिड़कने से पहले सभी फल तोड़ लें और छिड़काव के बाद एक सप्ताह तक फलों को खाने के काम न लायें।

वर्षाकालीन फसल के लिए यदि बीजाई जून माह में न की हो तो अब करें। एक एकड़ खेत में 10 टन गोबर की खाद डालकर जुताई करें और बीजाई से पहले 60 कि. ग्रा. किसान खाद (15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन) तथा 125 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट (20 कि.ग्रा. फास्फोरस) प्रति एकड़ की दर से दें। पोटाश खाद आवश्यकता पड़ने पर डालें। खेत को क्यारियों में बांट लें। पूसा सावनी, वर्षा उपहार या हिसार उन्नत किस्मों को प्रयोग में लायें। एक एकड़ खेत की बीजाई के लिए 5-6 किलो बीज की आवश्यकता होगी। बीजाई करने से पहले बीजोपचार बाविस्टिन (2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) नामक दवा से कर लें। बीजाई लाईनों में लगभग 45-60 सैं.मी. की दूरी पर करें तथा पौधों की दूरी 30 सैं.मी. रखें। आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा प्रारम्भ से ही खरपतवारों पर नियंत्रण रखें।

कद्दू जाति की सब्ज़ियां :- तरबूज़ व खरबूजे की फसल की तुड़ाई कर ली होगी। अत: खेत को दूसरी फसलों के लिए तैयार करें। इस जाति की और सब्ज़ियों जैसे लौकी, करेला, टिण्डा, तोरी, ककड़ी आदि के कच्चे फलों को तोड़ कर नियमित रूप से बाज़ार भेजें। आवश्यकता होने पर सिंचाई करें।

गर्मी की पुरानी फसल को फल छेदक मक्खी से बचाने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई. सी. या 500 ग्राम कार्बोरिल 50 प्रतिशत घु.पा. या 250 मि.ली. फैनिट्रोथियान 50 ई.सी. और 1.25 कि.ग्रा. गुड़ को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। लालड़ी का आक्रमण हो तो 100 ग्राम कार्बोरिल 50 घु.पा. को 100 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ की बेलों पर छिड़कें। कार्बोरिल 2.5 प्रतिशत का 10 किलोग्राम धूड़ा प्रति एकड़ धूड़ना भी अच्छा रहता है। सफेद चूर्णी रोग लगने पर 800 ग्राम घुलनशील गंधक 200 मि.ली. कैरोथेन का प्रति एकड़ की दर से खेत पर छिड़काव करें। गर्मी की फसल समाप्त होने पर जुताई करें और अन्य फसलें लगाने की तैयारी करें।

अब उग रही नई फसल पर लाल भूण्डी (लालड़ी) का प्रकोप होने पर 100 ग्राम कार्बोरिल 50 प्रतिशत घु.पा. (सेविन / हैक्साविन / कार्बाविन) को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। वैसे 10 किलो कार्बोरिल 2.5 प्रतिशत का धूड़ा भी प्रति एकड़ धूड़ सकते हैं।

क्रमश:

बीज कानून पाठशाला

हरियाणा (बीज संशोधन) विधेयक 2025

आर.बी. सिंह, बीज कानून रत्न, एरिया मैनेजर (सेवानिवृत), नेशनल सीड्स कार्पोरेशन लि. (भारत सरकार का संस्थान), हिसार (दूरभाष 79883–04770) और आर.पी. सिंह, सहायक महाप्रबंधक (सेवानिवृत), नेशनल सीड्स कार्पोरेशन लि. (भारत सरकार का संस्थान), हिसार

गतांक से आगे

D. उत्पादकता में सुधार नहीं : हरियाणा सरकार को इस संशोधन को लाने की जरूरत क्यों पड़ी? सरकार ने संशोधन के साथ लगे पत्र में **'उद्देश्यों तथा कारणों का विवरण'** में स्पष्ट किया गया है कि "किसानों को ऐसे बीज बेचे जा रहे हैं, जो कृषि उपज की उत्पादकता के सुधार के लिए परिणाम नहीं देते है।" यह कथन सत्यता से कोसों दूर है। नई किस्मों के कारण हरित क्रांति आई। भारत के विभाजन के समय जनसंख्या 34 करोड़ थी, उस समय भारतवासियों के खाने के लिए गेहूं/कनक अमेरिका की P.L.-480 (Public La-480) स्कीम के तहत मंगवाया जाता था, परन्तु अब देश में 140 करोड़ जनता के लिए देश में गेहूं के उत्पादन से जनता का पेट भरा जा रहा है और कुछ मात्रा में निर्यात भी किया जा रहा है। यह किस्मों की उत्पादकता के कारण ही सम्भव हो रहा है। हरियाणा में प्रति वर्ष उत्पादन बढ़ रहा है और इस वर्ष 125 लाख टन गेहूं उत्पादन की उम्मीद है।

यहां यह स्पष्ट करना भी आवश्यक है कि अन्य कारणों के साथ उक्त बीज के कारण हरियाणा को वर्ष 2010–11 एवं 2011–12 में लगातार गेहूं की प्रति हैक्टेयर उपज 46.24 क्विंटल तथा 51.82 क्विंटल होने के कारण 2 करोड़ मूल्य के कर्मण पुरुस्कार प्राप्त हुए।

यदि सरकार का खेत में उत्पादकता से अभिप्राय है, तो सरकार द्वारा 5000 किस्मों की न्यूनतम उपज निर्धारित करनी होगी। इसके अलावा प्रति ईकाई उत्पादन भूमि – प्रकार एवं भेद, उर्वरक – मात्रा, समय, खुराक Dose, प्रकार, विभेद, जल–प्रकार मात्रा, समय तथा अन्य कारकों पर निर्भर है, जो सर्वविदित सत्य Universal Truth है। दूसरी बात कही गई है कि बीज मानकों के अनुसार नहीं है।

E. सब–स्टैण्डर्ड बीज : यह कथन ही सत्य नहीं है, क्योंकि प्रमाणित एवं स्वयं प्रमाणित (टी. एफ.एल./टी.एल.) बीज भारतीय न्यूनतम बीज प्रमाणीकरण मानकों की पालना कर ही विक्रय होते हैं। हरियाणा सरकार का सीड एफार्समैन्ट विभाग – बीज निरीक्षक (DDA, SDAO, QCI तथा SMS) सैम्पल ले रहे है।, जिसमें मात्र 1 प्रतिशत या नगण्य प्रतिशत बीज लॉट फेल होते हैं, जबकि उर्वरक, कीटनाशी में प्रतिशत ज्यादा है और समाचार–पत्र के अनुसार हरियाणा राज्य में खाद्य पदार्थों के पांच साल में 597 सैम्पल में से 143 फेल आए, यानि 24 प्रतिशत फेल आये। इनसे विशाल जन हानि हो सकती है।

F. धारा का संशोधन गलत : सरकार ने धारा 19 का संशोधन कर उत्पादक कम्पनी और विक्रेता Dealer में बांट दिया। बीज अधिनियम–1966 की धारा–21 में कम्पनी द्वारा अपराध पहले से ही है, उसको धारा–19A में लाकर बीज उत्पादक एवं बीज विक्रेताओं की एकता को फाड़ दिया। उत्पादक विक्रेता का अटूट बन्धन है और एक–दूसरे के पूरक हैं।

G. राष्ट्रपति की सहमति आवश्यकता : यह संशोधन केन्द्र सरकार के अधिनियम–1966 में संशोधन किया गया है। अत: इस संशोधन की मान्यता केवल राज्यपाल (Governor) के द्वारा हस्ताक्षरित होने के बाद नहीं होगी, बल्कि इसे राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के लिए भेजा जाना आवश्यक है।

H. प्रमाणीकरण संस्थाएं पूर्ण भागीदार : राष्ट्र में लगभग 50 प्रतिशत और हरियाणा में लगभग 35 लाख क्विंटल प्रमाणित बीज उत्पन्न किया जाता है, जिसमें जनक आधार बीज क्रय करने, बुवाई करने से अन्तिम टैगिंग, सीलिंग तक पूरी प्रक्रिया उनकी निगरानी में होती है, तो उत्पादक के साथ–साथ हरियाणा राज्य बीज प्रमाणीकरण संस्था को भी दोषी माना जाए। बीज बनाने वाले कृषक को भी दोषी माना जाए। प्रमाणीकरण अधिकारी सील नहीं लगवाते, लेबल चैक नहीं करते, खेत में Source of Seed को वैरीफाई नहीं करते। अत: उनको भी Non-bailable अपराध की श्रेणी में रखा जाए।

I. उत्पादकों और विक्रेताओं में भ्रम : कुछ बीज विक्रेता भ्रम में डाल रहे हैं कि अमुक का उत्तरदायित्व है। अपराध एक समान है Cognizable – संज्ञेय है तथा Non-bailable है, दोनों वर्ग मिल कर प्रयास करें, सफलता शीघ्र मिल जायेगी। यदि बीज विक्रेता इस कानून को Bailable तथा Non-cognizable में परिवर्तन करवा देते हैं, तो बीज उत्पादकों को स्वत: लाभ मिल जाएगा, क्योंकि अपराध समान है। समस्या Non-bailable की है और पुलिस इस दलील से कि बीज उत्पादक कौन है, विक्रेता को मुक्त नहीं करेगी। बीज उत्पादक तो साथ रहेगा ही। ये दलील केवल न्यायालय सुनेगा, परन्तु न्यायालय जाने से पूर्व पुलिस विक्रेताओं का चरित्रहनन, प्रताड़ना, उत्पीड़न कर दे, तो दलील काम नहीं आई। दोनों वर्गों का संगठित होना आवश्यक है।

J. पड़ोसी राज्य के संघों का साथ मिला : मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और गुजरात से सकारात्मक प्रतिक्रिया मिल रही है और हरियाणा के बीज उद्योग का मनोबल बढ़ा रहे हैं। उन्हें साथ देना भी चाहिए, क्योंकि बीज विक्रय राज्य की सीमाओं तक नहीं समेटा जा सकता। साथ ही यह गैंगरीन की बीमारी इन पड़ोसी राज्यों में ही नहीं, पूरे भारत में फैलेगी। इसलिए आपस में सहयोग देना आवश्यक है और कुंवर वेचैन की पंक्तियाँ सार्थक हो जायेगी :-

पूरी धरा भी साथ दे तो और बात है
पर तू जरा भी साथ दे तो और बात है
यूं तो चलने को एक पांव से भी चलते हैं लोग
पर दूसरा भी साथ दे तो और बात है।

सकारात्मक बिन्दु :

1. विगत में कोई विवाद नहीं : कोई छुट–पुट घटनाओं को छोड़ कर हरियाणा के बीज उत्पादकों एवं विक्रेताओं द्वारा बीज का कोई प्रकरण नहीं हुआ, जिससे अपराध को संज्ञेय तथा अजमानती बनाना पड़ा।

2. पड़ोसी राज्यों में बीज को मान्यता : हरियाणा के बीज उत्पादक एवं बीज विक्रेता सचेत है और बीज कानूनों की पालना कर बीज तैयार करते हैं, इसलिये पड़ोसी राज्यों में हरियाणा का बीज लोकप्रिय है और सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है और मांग भी ज्यादा है।

3. नीदरलैंड प्रतिनिधि मंडल द्वारा सराहना : एन.ए.एस.आई. गवर्निंग बॉडी की 24.05.2018 में श्री अश्वनी गर्ग – प्रबन्ध निदेशक – सुपर सीड्स प्रा.लि., हिसार की सरप्रस्ती में नीदरलैंड सरकार के प्रतिनिधियों के साथ हरियाणा सरकार के साथ एक एम.ओ.यू. किया गया, जिसके साक्षी श्री ओ.पी. धनखड़, भूतपूर्व कृषि मंत्री रहे। इस अवसर पर हरियाणा के बीज उत्पादन एवं बीज गुणवत्ता को श्रेष्ठ बताया और नीदरलैंड के प्रतिनिधि मंडल ने बीज उत्पादन में श्रेष्ठता उत्कृष्ठता की प्रशंसा की। परन्तु हरियाणा की विधानसभा ने इस धारणा को धूमिल कर बीज उद्योग को निराश और हताश को बढ़ावा दिया।

4. परिभाषित नहीं : बीज अधिनियम 1966 में नकली बीज, मिस ब्रांड बीज तथा मिश्रित बीज (Adulterated Seed) को परिभाषित ही नहीं किया हुआ, केवल Standard और Sub-Standard शब्द ही परिभाषित है, परन्तु बीज मानक में सैम्पल फेल होने पर नकली बीज नहीं बन जाता, बल्कि वह अधोस्तर सब–स्टैन्डर्ड ही होता है।

बरसात की सब्ज़ियां टमाटर, कद्दू, लौकी, बैंगन उगाएं; मासिक बैठक में आग्रह

सब्ज़ियों की खेती और खपत को किचन गार्डन मॉडल अपनाएं

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों ने मौनसून की पूर्व संध्या पर सूबे के किसानों से सब्ज़ियों की खेती और खपत के लिए किचन गार्डन मॉडल अपनाने का आग्रह किया। जालंधर में आयोजित मासिक प्रशिक्षण शिविर के दौरान पी.ए.यू. किसान क्लब के 154 सदस्यों को संबोधित करती हुई सब्ज़ी वैज्ञानिक डॉ. रूमा देवी ने पोषण उद्यान मॉडल के महत्व, दायरे और लाभों के बारे में बताया, जो घरेलू खपत एवं व्यवसायिक सब्ज़ी की खेती के दोहरे उद्देश्य को पूरा करता है। चूंकि, यह मौसम सब्ज़ियों की बुवाई के लिए काफी सुहावना है, इसलिए उन्होंने किसानों से टमाटर, कद्दू, लौकी, बैंगन आदि बरसात की सब्ज़ियां उगाने का आग्रह किया।

दलहन विशेषज्ञ डॉ. हरप्रीत कौर ने दलहन की खेती को विविधता के लिए एक व्यवहार्य विकल्प के रूप में बढ़ावा दिया। उन्होंने कहा कि मूंग, माश, अरहर आदि दालों की मांग में उछाल के साथ दालों की आसमान छूती कीमतों के मद्देनज़र उत्पादकों को मौद्रिक लाभ मिलने की संभावना है। सभी सामान्य और कुलीन वर्गों के लिए दालों की खेती एक समझदारी भरा दीर्घकालिक निवेश है, जो हमेशा के लिए निश्चित है।

क्लब के सचिव सतवीर सिंह ने रिसोर्स पर्सन और किसानों का स्वागत किया। क्लब के अध्यक्ष मनप्रीत ग्रेवाल ने धन्यवाद प्रस्ताव रखा। यह कार्यक्रम अतिरिक्त निदेशक (संचार) डॉ. टी. एस. रियाड़, एसोसिएट निदेशक (जनसम्पर्क) डॉ. कुलदीप सिंह के मार्गदर्शन में आयोजित किया गया।

6 गुणा 6 वर्गमीटर के किचन गार्डन मॉडल में उगाएं 27 सब्ज़ियां

पी.ए.यू. ने किचन गार्डन मॉडल विकसित किया है, जो 6×6 वर्गमीटर क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की 27 सब्ज़ियों को उगाने के लिए डिज़ाइन किया गया है। यह मॉडल एक परिवार को पूरे साल ताज़ा और स्वस्थ भोजन उपलब्ध करवाता है। इसे शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में लागू किया जा सकता है।

लोहगढ़ के किसान ने गेहूं–धान से किनारा कर अपनाई फसल विविधता

ड्रैगन फ्रूट की खेती में एक बार निवेश 25 साल तक फल, लगाए 3200 पौधे

फिरोज़पुर के गांव लोहगढ़ का किसान फसली विविधता को अपनाते हुए मुख्य फसलों को छोड़ कर ड्रैगन फ्रूट की खेती कर रहा है। उसके लिए यह आमदनी का बेहतर स्त्रोत है। ड्रैगन फ्रूट की खेती बेहद खास है। उसने दो एकड़ में ड्रैगन फ्रूट के 3200 पौधे लगाए। ड्रैगन फ्रूट को एक बार लगा कर 25 वर्षों तक मुनाफा लिया जा सकता है। अपने विदेशी दोस्त से प्रभावित होकर उसने इसे शुरू किया। वह अब केला, अनार और नींबू भी लगाने पर विचार कर रहा है।

किसान गुरचंद सिंह का कहना है कि आजकल के युवा किसान परम्परागत खेती से हट कर कुछ और नया करना चाहते हैं। यह पीढ़ी पढ़–लिख कर मुख्य फसलों को छोड़ बागवानी का रुख कर रही है और खेतीबाड़ी में नित–नए प्रयोग कर अपनी आय बढ़ाने की कोशिश कर रही है। वह आधुनिक तकनीक, सही शोध और नई फसल से कृषि व्यवसाय को नया रूप देने की कोशिश कर रही है।

उसका कहना है कि ड्रैगन फ्रूट की खेती दूसरी फसलों के मुकाबले ज्यादा कमाई देती है। ड्रैगन फ्रूट फल बाज़ार में प्रति नग करीब 150 रुपए में मिलता है। यह अलग–अलग वैरायटियों का होता है। इस व्यवसाय में एक बार का निवेश है। ड्रैगन फ्रूट का पौधा 20 से 25 वर्ष तक फल देता है। दो वर्षों में दो एकड़ ज़मीन में इसे लगाने का खर्च करीब 10 से 12 लाख रुपए आता है और उत्पादन सितम्बर से फरवरी तक लगातार प्राप्त होता है। यह केक्टस प्रजाति का पौधा है। उसके लगाए पौधे आगामी अगस्त में फल देना शुरू कर देंगे। अगले साल तो पूरा फल देंगे।

गुरचंद ने कहा - नकोदर के एन.आर. आई. दोस्त ने दी सीख

दो वर्ष पहले मैं एन.आर.आई. दोस्त से मिलने नकोदर गया, जिसने सलाह दी कि वह ड्रैगन फ्रूट की खेती करे। इसमें माफी मुनाफा है। वर्ष 2024 में मैंने दो एकड़ में यह खेती शुरू कर दी। मैं नकोदर से रेड सी किस्म के ड्रैगन फ्रूट की 3200 कलमें और बलाचौर से ढांचे लाया और उन्हें खेत में लगाया। खेत में 10–10 फुट पर कई बेड बनाए। हर बेड पर 6–6 फीट पर 800 पोल लगाए। हर पोल के आस–पास 4 पौधे लगाए। एक वर्ष बाद ये फल देना शुरू कर देंगे। एक पौधे पर लगभग 40 फल लगते हैं। बागवानी विभाग सब्सिडी देता है।

डॉ. वीरेन्द्र सिंह लाठर,
पूर्व प्रधान वैज्ञानिक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,
नई दिल्ली (मो. 94168–01607)

उर्वरक सब्सिडी का प्रत्यक्ष नकद हस्तांतरण के रूप में किये जाने का मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सरकारी कल्याणकारी योजनाओं का लाभ सही लाभार्थियों तक समय पर पहुंचे, जिससे योजनाओं की प्रभावशीलता में सुधार होता है। इसका मुख्य लक्ष्य पारदर्शिता बढ़ाना है।

हरित क्रांति के दौर से पहले किसान प्राकृतिक खेती किया करते थे, जिसमें रासायनिक उर्वरकों की खपत नगण्य थी। उस समय फसलों का उत्पादन और उत्पादकता कम थी। देश के बार-बार अकालग्रस्त होने से, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा विदेशी अनाज के आयात पर निर्भर थी। वर्ष 1943 के बंगाल अकाल में 30 लाख से ज्यादा लोग भूख से मारे गए। ऐसी विकट परिस्थितियों में, नीतिकारों ने हरित क्रान्ति के जनक डा. नॉर्मन बोरलॉग द्वारा विकसित गेहूं की बौनी किस्मों और अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान से धान की बौनी किस्मों का आयात करके, देश में हरित क्रांति का आगाज किया। इन उन्नत गेहूं-धान की बौनी किस्मों और बाजरा-ज्वार की हाईब्रीड किस्मों से पूरा उत्पादन लेने के लिए, भारी मात्रा में उर्वरकों का आयात और उत्पादन व भूजल आधारित ट्यूबवेल से सिंचाई सुविधाओं का विस्तार किया गया।

हरित क्रांति दौर में अपनाए गए कृषि सुधारों से देश में विभिन्न फसलों के उत्पादन और उत्पादकता में कई गुणा बढ़ोतरी हुई। जिसकी बदौलत पिछले 5 दशकों से, लगातार बढ़ती आबादी के बावजूद, देश खाद्यान्न में आत्मनिर्भर बना हुआ है। चावल का पचास हजार करोड़ रुपये से ज्यादा का वार्षिक निर्यात भी कर रहा है।

भारत में वर्ष 2022 में उर्वरक की औसत खपत 193 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर कृषि योग्य भूमि थी और लगभग 30 करोड़ मीट्रिक टन उर्वरक की खपत हुई। भारत में यूरिया सबसे ज्यादा इस्तेमाल होने वाला उर्वरक है। देश में उर्वरक की खपत प्रति वर्ष बढ़ती जा रही है। उर्वरकों की घरेलू मांग को पूरा करने के लिए सरकार भारी मात्रा मे वार्षिक आयात करती है।

हरियाणा-पंजाब-पश्चिम उत्तर प्रदेश आदि प्रदेशों में गेहूं-धान फसल चक्र की उत्पादकता 10 टन वार्षिक से ज्यादा है। इसी तरह पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडू, केरल आदि प्रदेशों में भी वार्षिक धान की 2-3 फसल चक्र की उत्पादकता 10 टन से ज्यादा है। इसलिए इन प्रदेशों में उर्वरक की वार्षिक खपत राष्ट्रीय औसत से दुगने से भी ज्यादा प्रति हैक्टेयर 250 किलो नाइट्रोजन, 120 किलो फास्फोरस और 200 किलो पोटाशियम के आसपास है। जबकि वर्षा आधारित बारानी फसलों बाजरा, ज्वार, दलहन, तिलहन आदि के उत्पादक राज्यों में उर्वरक की वार्षिक खपत राष्ट्रीय औसत से काफी कम रहती है। उच्च उत्पादकता वाली कन्दमूल और गन्ने जैसी फसलों को अच्छी पैदावार देने के लिए ज्यादा पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, जिससे इन फसलों की रासायनिक उर्वरक की खपत बहुत ज्यादा होती है।

हरित क्रांति दौर से राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए, नीतिकारों ने कृषि क्षेत्र के लिए रासायनिक उर्वरक की सस्ती दर पर आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए उर्वरक सब्सिडी नीति को अपनाया। किसानों को सस्ती दरों पर उर्वरक उपलब्ध कराने पर सरकार का व्यय पिछले वित्त वर्ष में 6 प्रतिशत घटकर रुपये 1,77,129.5 करोड़ रह गया, जो 2023-24 के दौरान रुपये 1,88,291.62 करोड़ था। यह गिरावट मुख्य रूप से यूरिया और डाई-अमोनियम फॉस्फेट (डीएपी) के आयात में गिरावट तथा अंतर्राष्ट्रीय कीमतों में कमी के कारण हुई है। गिरावट के बावजूद, वास्तविक सब्सिडी बजट में प्रदान की गई रुपये 1,71,310 करोड़ से 3.4 प्रतिशत अधिक है। यूरिया, जो एक पूर्णतः नियंत्रित उर्वरक है, का विक्रय मूल्य पिछले कई वर्षों से 267 रुपये प्रति (45 किग्रा) बैग पर बना हुआ है। उद्योग के अनुमानों से पता चलता है कि सब्सिडी के बिना यह लगभग 1,750 रुपये प्रति बैग हो सकता है। इसी प्रकार, डीएपी का खुदरा मूल्य 1,350 रुपये प्रति बैग तय किया गया है, जो बिना सब्सिडी के लगभग 3,500 रुपये प्रति बैग हो जाएगा।

सरकारी विभागों के कदाचार की वजह से लगभग आधे से ज्यादा सब्सिडी वाले कृषि ग्रेड उर्वरक की खपत उद्योगपतियों की फैक्टरियों में गैर-कानूनी तौर पर हो रही है यानी कृषि के लिए दी जा रही केन्द्रीय उर्वरक सब्सिडी का लाभ किसानों को नहीं मिलकर, उद्योगपतियों को मिल रहा है। हर वर्ष फसल बुआई के समय किसानों को उर्वरक पूरी मात्रा में नहीं मिल पा रहा है। उन्हें उर्वरक खुले बाजार से महंगे दाम पर ब्लैक में लेना पड़ रहा है। किसानों को समय पर पूरी मात्रा में उर्वरक नहीं मिल पाने से, फसल की उत्पादकता पर भी दुष्प्रभाव पड़ रहा है।

कृषि ग्रेड उर्वरक किसानों को सब्सिडी वाले उर्वरक नहीं मिलने के चलते सरकार द्वारा नियंत्रित सहकारी उर्वरक कम्पनी इफ्को किसानों को वर्ष 2021 से नैनो यूरिया बेच रही है। इफ्को कम्पनी के दावों के अनुसार नैनो यूरिया तरल स्वरूप में, पारंपरिक दानेदार यूरिया की 50 किलो की एक बोरी का विकल्प है। हरित क्रांति दौर से अग्रणी रहे पंजाब कृषि विश्वविद्यालय आदि अनेक संस्थानों के अनुसंधान में नैनो यूरिया को कृषि क्षेत्र के लिए अनुपयोगी पाया गया है।

कृषि ग्रेड उर्वरक के उद्योग में गैर-कानूनी दुरुपयोग को रोकने और उर्वरक सब्सिडी को युक्तिसंगत बनाकर किसानों तक पहुंचाने के लिए सरकार पिछले कई वर्षों से प्रयासरत है। कृषि सुधारों में सबसे ज्यादा तर्कसंगत उपाय उर्वरक सब्सिडी का किसानों को प्रत्यक्ष नकद हस्तांतरण रहेगा। उर्वरक सब्सिडी के मौजूदा सरकारी आंकड़ों के हिसाब से प्रति एकड़ सिंचित भूमि के लिए 7,000 रुपये और वर्षा आधारित बारानी भूमि के लिए 4,000 रुपये दिये जाने चाहिए। कृषि मंत्रालय ने पहले ही पीएम-किसान, पीएम फसल बीमा योजना, मृदा स्वास्थ्य कार्ड जैसी विभिन्न योजनाओं के आंकड़े तथा प्रत्येक किसान को नवीनतम विशिष्ट आईडी, जिसमें भूमि जोत, बोई गई फसल और उपज जैसे विवरण शामिल है, उर्वरक मंत्रालय के साथ साझा कर दिया है।

उर्वरक सब्सिडी का प्रत्यक्ष नकद हस्तांतरण के रूप में किये जाने का मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सरकारी कल्याणकारी योजनाओं का लाभ सही लाभार्थियों तक समय पर पहुंचे, जिससे योजनाओं की प्रभावशीलता में सुधार होता है। इसका मुख्य लक्ष्य पारदर्शिता बढ़ाना है।